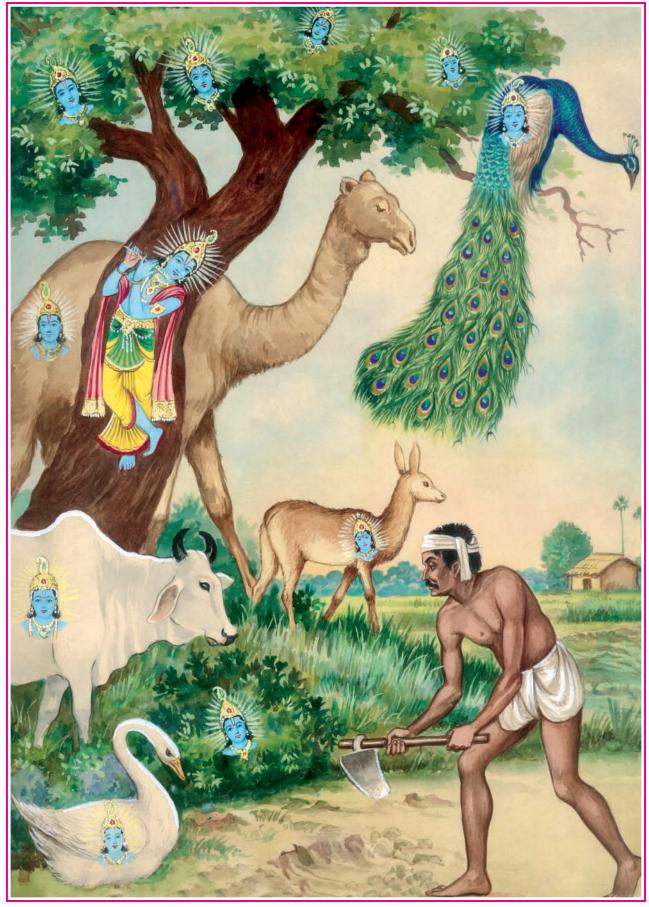
कल्याणा

गीताप्रेस, गोरखपुर





सबमें भगवद्-दृष्टि

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥



शान्ता महान्तो निवसन्ति सन्तो वसन्तवल्लोकहितं चरन्तः। तीर्णाः स्वयं भीमभवार्णवं जनानहेतुनान्यानपि तारयन्तः॥

वर्ष ८९ गोरखपुर, सौर पौष, वि० सं० २०७२, श्रीकृष्ण-सं० ५२४१, दिसम्बर २०१५ ई० पूर्ण संख्या १०६९

गीताका सन्देश—सबमें भगवद्-दृष्टि

सब भूतोंमें स्थित आत्मा है, आत्मामें है भूत अशेष। * * ***** योगयुक्त सबमें समदर्शी योगीकी यह दृष्टि विशेष॥ * ***** मुझको सर्वत्र देखता, मुझमें देखे सारा दृश्य। * *** *** उसके लिये अदृश्य नहीं मैं, वह भी मुझसे नहीं अदृश्य॥ * ***** सब भूतोंमें स्थित मुझको जो भजता है रख एकीभाव। * ***** * वह योगी रह सब प्रकारसे मेरे हित करता बर्ताव॥ **-**X-* जो अपनी ही भाँति देखता है सबमें सुख-दु:ख समान। * * * अर्जुन! वह माना जाता है योगी सबसे श्रेष्ठ महान्॥ * * * [पद-रत्नाकर]

१- गीताका सन्देश—सबमें भगवद्-दृष्टि	कल्याण, सौर पौष, वि० सं० २०७२, श्रीकृष्ण-सं० ५२४१, दिसम्बर २०१५ ई० विषय-सूची		
१- गीताका सन्देश—सबमें भगवद्-दृष्टिः २- कल्याण ५- त्रावराजेश्वरि भगवती श्रीविद्या [आवरणिवत्र-पिरचय] ६ ४ प्रेमकी विलक्षण एकता (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ५- सौ करोड़ रुपयोंका दान प्रिरक प्रसंग] (श्रीमहाबीरप्रसादजी नेविटया) ६- मानस पुन्य होष्टि निर्हे पापा' (ब्रह्मलीन धर्मसग्नाट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) ७- सच्चौ तीर्थयात्रा १० सच्चौ तीर्थयात्रा १० स्वान्तिक अध्यात्म [प्रेषक—हिक्कृण नीखरा (गुप्त)]. १० सच्चौ तीर्थयात्रा १० स्वान्तिक अध्यात्म [प्रेषक—हिक्कृण नीखरा (गुप्त)]. १० स्वान्तिक अध्यात्म [प्रेषक श्रीराणि—नुलसी (श्रीराणीचकुमारजी वैट). १० सहाती त्रियंत्रा अस्ता प्राचन प्रदेश (श्रीराणीचकुमारजी वैट). १० सहाती त्रियंत्रा अस्ता प्राचन प्रकंग । १० अच्चतिक्षमा एक पावन-प्रसंग [प्राचन प्रसंग] (आवार्य श्रीरामरंगजी). १० अख्न [क्कृणाप्ता विद्या]. १० अख्न [क्कृणाप्ता विद्या]. १० अख्न [प्राचन प्राचन प्रसंग] प्राचन अस्तिक प्रयंगाम स्वाराज). १५ सम्प्रके व्रतिप्रमं प्राचनी श्रीरामरंग्वराजी शर्मा प्राचनी प्रतंग (प्राचनी). १५ अपनेत्रत्वतीर्यंजी महाराज). १५ स्वन्तिक प्रवंगी श्रीरामस्व व्रत-पर्व]. १५ क्रातस्व-पर्व [प्राचमासके व्रत-पर्व]. १५ क्रातस्व-पर्व [प्राचमासके व्रत-पर्व]. १५ क्रातस्व-पर्व [प्राचमासके व्रत-पर्व]. १५ क्रातस्व-पर्व [प्राचमासके व्रत-पर्व]. १५ प्राचन अस्तिक प्राचनी श्रीविद्या. १५ प्राचन अस्तिक प्राचन प्रवंग प्राचनी स्वाराजी आस्तिक विषय-प्रची. १५ क्रातस्व-पर्व [प्राचन प्राचन प्रवंग प्राचन प्रवंग प्रमाणिक विषय प्राचनी स्वाराजी स्वाराजी स्वाराजी स्वाराजी स्वाराजी स्वराचनी स्वाराजी स्वाराजी स्वराचन प्राचन प			
२ - कल्याण	विषय पृष्ठ-संख्या	विषय पृष्ठ-संख्या	
१ - राजराजेश्वरी भगवती श्रीविद्या (रंगीन) आवरण-पृष्ठ ४ - तुलसी-पूजन	२- कल्याण	(श्रीमुलखराजजी विरमानी)	
२- सबमें भगवद्-दृष्टि('') मुख-पृष्ठ ५- जटायु-रावण-युद्ध('') ३- पृथ्वीका फटना और अपराधियोंका ६- गरीबोंकी सेवा करते सुमन और गोपाल . ('') उसमें समा जाना(इकरंगा)	——●∈ चित्र-	-सूची	
(जय पावक रवि चन्द जयति जय । मत-चित-शानँद शम जय जय ॥)	२- सबमें भगवद्-दृष्टि('') मुख-पृष्ठ ३- पृथ्वीका फटना और अपराधियोंका	४ – तुलसी – पूजन	
यन वानक वान अप्र समात सम । तत् । अत् आति मूना अस अस ॥	जय पावक रवि चन्द्र जयित जय	। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय॥	
अजिल्द ₹२०० जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥ अजिल्द ₹१००	अजिल्द ₹२०० सजिल्द ₹२२० विदेशमें Air Mail विषिक US\$	1 गौरीपति जय रमापते ॥ 345 (₹2700) ∫ Us Cheque Collection सजिल्द ₹११००	
संस्थापक — ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका आदिसम्पादक — नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार सम्पादक — राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़ केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन–कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित	आदिसम्पादक — नित्यलीलालीन सम्पादक — राधेश्याम खेमका, सह केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन -कार्यालय के	भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार सम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़ लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित	
website : www.gitapress.org e-mail : kalyan@gitapress.org © (0551) 23347 सदस्यता-शुल्क —व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें।			

संख्या १२] कल्याण जो मनुष्य सचमुच भगवान्के नामका आश्रय ले बन्द कर दे और उठते-बैठते, चलते-फिरते, सोते-लेता है, वही भाग्यवान् है, वही सुखी है और वही जागते जीभसे बराबर भगवानुका नाम लेता रहे। अपने सच्चा साधक है। जिसकी जीभ और चित्तवृत्ति जिम्मेका काम सब करे, पर कामभरको बोले और भगवन्नाममें लगी है, वही साधु है, उसका जीवन धन्य जीभको लगाये रखे—भगवानुके नाम-जपमें। व्यर्थ है और उसका सत्संग सभीके लिये वाञ्छनीय है। बोलना बन्द कर देनेसे चार लाभ होते हैं-झूठ छूटता जिसकी जिह्वा निरन्तर पतित-पावन हरिनामकी रट है, परनिन्दा छूटती है, व्यर्थकी चर्चा छूटती है तथा लगाती रहती है, वह चाण्डाल होनेपर भी सबसे श्रेष्ठ वाणीमें शक्ति आ जाती है और भगवन्नामके जपनेका है; क्योंकि वही प्रभुका प्यारा है। भगवान्के नाम-पूरा अवसर मिलता है। कीर्तनसे केवल पापोंका नाश ही नहीं होता—पाप-जिह्वाके दोषोंसे बचनेके लिये यह आवश्यक है नाशके लिये तो शास्त्रोंमें अनेक प्रायश्चित्त बतलाये ही कि हम अधिक समयतक मौन रहें और इस प्रकारकी गये हैं, नामका फल है पंचम पुरुषार्थ—श्रीकृष्णप्रेमकी प्रतिज्ञा अवश्य कर लें कि बोलना अनिवार्य हुए बिना बोलेंगे ही नहीं तथा वह भी आवश्यकताभर, अधिक प्राप्ति। पापनाश और मुक्ति तो नामके आनुषंगिक फल हैं, जैसे सूर्यके उदय होनेपर प्रकाश होता ही है। नहीं और वह भी अच्छी तरह सोच-विचारकर जहाँ-नामसे सायुज्य मोक्षकी आकांक्षा भी मिट जाती तहाँ जैसे-तैसे नहीं। दुसरा यह निश्चय करें कि वाणी है; क्योंकि उस मोक्षमें प्रियतमके नाम-गुणका कीर्तन भगवानुका नाम लेनेके लिये मिली है, अतएव उसे बराबर भगवान्का नाम लेनेमें लगाये रखना है, आवश्यकता कहाँ ? जैसे जगतके प्रकाशक प्रभाकरके प्रकट होते ही होनेपर कम-से-कम बोलकर पुन: भगवान्का नाम जगत्का सारा अन्धकार नष्ट हो जाता है, वैसे ही नामरूपी सूर्यके उदित होते ही पाप-समूह समूल नष्ट लेना आरम्भ कर देना है। हो जाता है। भगवान्का नाम अज्ञान-समुद्रसे तारनेके वे लोग सचम्च बडे भाग्यशाली हैं, जिन्हें बहुत कम बोलना पड़ता है और जो निरन्तर भगवान्का नाम लिये तरणीके समान है। ऐसे जगन्मंगलकारी हरिनामकी जय हो—'जयित जगन्मङ्गलं हरेर्नाम।' भगवन्नामकी लेते हैं। प्रात:काल उठनेसे रात्रिमें सोनेतक जीभपर वास्तविक महिमा क्या है, इसे कोई कह नहीं सकता। निरन्तर भगवान्का नाम आता रहे—इसकी पूरी चेष्टा वह अचिन्त्य है, अनिर्वचनीय है। नामकी महिमा करनी चाहिये। इससे अपने-आप बोलना कम हो जायगा और पर-चर्चाको अवकाश नहीं मिलेगा। भक्तलोगोंने जो गायी है, वह तो कृतज्ञ-हृदयके उद्गार-मात्र हैं, अर्थात् जिन महापुरुषोंको नामसे भगवान्का नाम न भूले, भूल जाय तो इसके लिये खेद अशेष लाभ हुए हैं, उन्होंने उन अशेष लाभोंको लक्ष्यमें हो। भगवन्नाम-जप-कीर्तन करते समय उसे सुनते भी

भक्तलोगोंने जो गायी है, वह तो कृतज्ञ-हृदयके जायगा और पर-चर्चाको अवकाश नहीं मिलेगा। उद्गार-मात्र हैं, अर्थात् जिन महापुरुषोंको नामसे भगवान्का नाम न भूले, भूल जाय तो इसके लिये खेद अशेष लाभ हुए हैं, उन्होंने उन अशेष लाभोंको लक्ष्यमें हो। भगवन्नाम-जप-कीर्तन करते समय उसे सुनते भी रखकर भगवन्नामकी महिमा गायी है। नामके विषयमें रहें। इससे मनको उसमें लगाना पड़ेगा; क्योंकि बिना इसके आगे क्या कहा जाय, जैसा कि तुलसीदासजीने मनको उसमें लगाये सुन न सकेंगे। यह मानसिक स्मरण कह दिया है कि 'रामु न सकिंह नाम गुन गाई।' है। इसका बड़ा महत्त्व है। साधकको चाहिये कि वह व्यर्थका बोलना

राजराजेश्वरी भगवती श्रीविद्या आवरणचित्र-परिचयः

रंग क्रमश: हरित, रक्त, धूम्र, नील और पीत होनेसे ये मुख लौहित्यनिर्जितजपाकुसुमानुरागां पाशाङ्कशे धनुरिषूनिप धारयन्तीम्।

ताम्रायतामरुणमाल्यविशेषशोभां अग्नि हैं। इनमें षोडश कलाएँ पूर्णरूपसे विकसित हैं,

ताम्बूलपूरितमुखीं त्रिपुरां नमामि॥ अर्थात् अपनी अरुणाभ (रक्तिम) आभासे जो जपा

कुसुमके लौहित्य (रक्त) वर्णको भी तिरस्कृत करनेवाली

हैं, जो अपने हाथोंमें पाश, अंकुश, धनुष और बाण धारण

करनेवाली, ताम्रवर्णसदृश सुन्दर मालाके कारण विशेष

सुन्दरतासे युक्त हैं, जिनका मुख ताम्बूलसे पूरित है, ऐसी देवी त्रिपुराको मैं प्रणाम करता हूँ।

राजराजेश्वरी भगवती श्रीविद्या दशमहाविद्याओंमें षोडशी नामसे जानी जाती हैं। ये माहेश्वरी शक्तिकी सबसे

मनोहर श्रीविग्रहवाली सिद्ध देवी हैं। महाविद्याओं में इनका चौथा स्थान है। सोलह अक्षरोंके मन्त्रवाली इन देवीकी

अंगकान्ति उदीयमान सूर्यमण्डलकी आभाकी भाँति है। इनकी चार भुजाएँ एवं तीन नेत्र हैं। ये शान्तमुद्रामें लेटे हुए

सदाशिवपर स्थित कमलके आसनपर आसीन हैं। इनके चारों हाथोंमें क्रमश: पाश, अंकुश, धनुष और बाण सुशोभित हैं। वर देनेके लिये सदा-सर्वदा तत्पर भगवतीका श्रीविग्रह

सौम्य और हृदय दयासे आपूरित है। जो इनका आश्रय ग्रहण कर लेते हैं, उनमें और ईश्वरमें कोई भेद नहीं रह

जाता है। वस्तुत: इनकी महिमा अवर्णनीय है। संसारके समस्त मन्त्र-तन्त्र इनकी आराधना करते हैं। वेद भी इनका वर्णन करनेमें असमर्थ हैं। भक्तोंको ये प्रसन्न होकर सब

प्रशान्त हिरण्यगर्भ ही शिव हैं और उन्हींकी शक्ति षोडशी हैं। तन्त्रशास्त्रोंमें षोडशी देवीको पंचवक्त्र अर्थात्

कुछ दे देती हैं, अभीष्ट तो सीमित अर्थवाच्य है।

पाँच मुखोंवाली बताया गया है। चारों दिशाओंमें चार और एक ऊपरकी ओर मुख होनेसे इन्हें पंचवक्त्रा कहा जाता है। देवीके पाँचों मुख तत्पुरुष, सद्योजात, वामदेव अघोर

भी उन्हीं रंगोंके हैं। देवीके दस हाथोंमें क्रमश: अभय, टंक, शूल, वज्र, पाश, खड्ग, अंकुश, घण्टा, नाग और

अतएव ये षोडशी कहलाती हैं। षोडशीको श्रीविद्या भी माना जाता है। इनके ललिता, राजराजेश्वरी, महात्रिपुरसुन्दरी, बालापंचदशी आदि अनेक

नाम हैं। इन्हें आद्याशक्ति माना जाता है। अन्य विद्याएँ भोग या मोक्षमेंसे एक ही देती हैं। ये अपने उपासकको

भृक्ति और मुक्ति दोनों प्रदान करती हैं। इनके स्थूल, सूक्ष्म, पर तथा तुरीय चार रूप हैं।

एक बार पराम्बा पार्वतीजीने भगवान् शिवसे पूछा— 'भगवन्! आपके द्वारा प्रकाशित तन्त्रशास्त्रकी साधनासे

जीवके आधि-व्याधि, शोक-संताप, दीनता-हीनता तो दूर हो जायँगे, किंतु गर्भवास और मरणके असह्य दु:खकी

निवृत्ति तो इससे नहीं होगी। कृपा करके इस दु:खसे निवृत्ति और मोक्षपदकी प्राप्तिका कोई उपाय बताइये।' परम

कल्याणमयी पराम्बाके अनुरोधपर भगवान् शंकरने षोडशी श्रीविद्या-साधना-प्रणालीको प्रकट किया। भगवान् शंकराचार्यने भी श्रीविद्याके रूपमें इन्हीं षोडशी श्रीविद्याकी

द्वीप है, जिसमें कल्पवृक्षोंकी बारी है, नवरत्नोंके नौ परकोटे हैं; उस वनमें चिन्तामणिसे निर्मित महलमें ब्रह्ममय सिंहासन है, जिसमें पंचकृत्यके देवता ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और ईश्वर आसनके पाये हैं और सदाशिव फलक हैं। सदाशिवके नाभिसे निर्गत कमलपर विराजमान भगवती षोडशी त्रिपुरसुन्दरीका

जो ध्यान करते हैं, वे धन्य हैं। भगवतीके प्रभावसे उन्हें भोग

स्तृति करते हुए कहा है कि 'अमृतके समुद्रमें एक मणिका

और मोक्ष दोनों सहज ही उपलब्ध हो जाते हैं।' भैरवयामल तथा शक्तिलहरीमें इनकी उपासनाका विस्तृत परिचय मिलता है। महर्षि दुर्वासा एवं आद्यशंकराचार्य आदि इनके

प्रेमकी विलक्षण एकता संख्या १२] प्रेमकी विलक्षण एकता (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) गीतामें हमलोगोंके लिये बडा ऊँचा उपदेश है। मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु। हम अर्जुन-जैसे भी नहीं हैं। हम मोक्ष भी चाहते हैं और मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे॥ 'चिन्ता न हो' यह भी चाहते हैं। पर जो उच्च श्रेणीके सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। भक्त होते हैं, वे 'क्षमावान् एवं दयालु' ऐसा नहीं कहते। अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥ उन्हें दीनबन्धु भी क्यों कहे ? कहें वे जिन्हें आपसे कुछ (गीता १८।६५-६६) चाह हो। जो ख़ुशामदी होते हैं, वे उन्हें दयालु कहते भगवान् श्रीकृष्णके द्वारा कहे हुए इन श्लोकोंमें कितना ऊँचा भाव भरा है। भगवान् कहते हैं कि मेरेमें हैं। हम नहीं कहते, हम दया भी नहीं चाहते। आप आर्त, अनाथ और दीनोंके नाथ हैं, उनपर आप दया करें। अचल मनवाला हो, मेरा भजन कर, मेरी ही पूजा कर, मुझे ही नमस्कार कर। दृढ विश्वास कर, ऐसा करनेसे कोई लखपित आये और उसे दो रुपया भेंटमें दें तो वह कहेगा कि यह दीनोंको दे दो। जहाँ उच्च श्रेणीका प्रेम तू मुझे ही प्राप्त होगा। सब धर्मींका आश्रय छोड़कर मेरी शरण आ जा, मैं तुझे सारे पापोंसे मुक्त कर दूँगा। शोक होता है, जहाँ सारे भाव समाप्त हो जाते हैं, वहाँ न छोटे-बड़ेका भाव है, न दास्यभाव है, न वात्सल्यभाव मत कर। क्या इससे भी बढ़कर कोई बात हो सकती है। है, न माधुर्यभाव है। वहाँ स्वकीय-परकीय-सम्बन्ध ही शास्त्र तो अनन्त हैं। अर्जुन ही सर्वश्रेष्ठ भक्त नहीं नहीं है, तब माधुर्यभाव कैसे हो। भगवान् पति हैं, में उनकी पत्नी हूँ।'—यह भाव भी वहाँ नहीं, सख्य-भाव थे, उनसे बढ़कर बहुत भक्त हुए हैं। श्रीमद्भागवतमें भगवान् स्वयं कहते हैं—'ता मन्मनस्का मत्प्राणाः' भी नहीं है। यह बात अनिर्वचनीय है। वहाँ दो बात (१०।४६।४)। गोपियाँ जिस प्रकार तत्त्वको जानती रहती ही नहीं। दीखनेमात्रके ही दो हैं, पर दो हैं नहीं, एक ही हैं। जैसे दो हाथ हैं, इन्हें मिला लिये तो एक हैं, वैसा कोई भी नहीं जानता। भगवान्ने अर्जुनसे कहा—'मन्मना भव।' पर गोपियाँ तो ऐसी थीं ही। हो गये। इनमें बडा-छोटा कौन? सोचना चाहिये-ये नित्य सूर्योदयसे पूर्व उठनेवालेको कोई कहे कि दो हैं या एक। देखनेमें दो होते हुए भी एक हैं, एक 'तुम सूर्योदयसे पूर्व उठा करो' तो वह हँसेगा कि यह दीखते हुए भी दो हैं। वेदान्तके सिद्धान्तमें तो वस्तुसे जानता नहीं। अतः भगवान् गोपियोंको ऐसा उपदेश नहीं एक ही हैं। पर यहाँ एक होते हुए भी दो हैं। दो होते कर सकते। गोपियाँ अर्जुनसे बहुत ऊँचे दर्जेकी थीं। जो हए भी एक हैं। बहुत श्रद्धालु होता है, उसके सामने ऐसा नहीं कहा जा ऐसे उच्च श्रेणीके प्रेममें वेदान्तसे भी विलक्षण सकता कि 'मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ, प्रतिज्ञा करके एकता है, एक-सा अलौकिक प्रेम है— कहता हूँ।' सर्वभृतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः। अर्जुनसे भगवान्ने कहा—'मा शृचः' शोक मत सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते॥ कर। [यदि वह भगवान्के स्वभावको जानता तो शोक (गीता ६।३१) हो ही कैसे सकता था।] सभी पापोंसे छुड़ा दुँगा। जो भगवान्में ही बरतना भिन्नता है और एकत्वमें उच्च श्रेणीके भक्त होते हैं, वे पापोंसे माफी नहीं चाहते। स्थित होना एकता। इसलिये दोनों बातें आयीं। एकतामें वे यह भी नहीं कहते कि 'आप बड़े क्षमावान् हैं, दयालु स्थित होकर भजन करना एक बहुत विलक्षण उपासना हैं', दासोंके दोषोंको भी नहीं देखते, वे तो भोगकर ही है। वहाँ प्रभु नहीं कहा जाता, वहाँ तो एकता है। प्रेम, संतोष करते हैं। अर्जुनने तो छूट स्वीकार की। प्रेमी और प्रेमास्पद तीनों एक हैं। वहाँ दोनों प्रेमी और

भाग ८९ दोनों ही प्रेमास्पद हैं। एककी दृष्टिमें एक प्रेमी है और वार्तालाप बहुत उच्च श्रेणीका होने लगेगा तो एक प्रेमास्पद। यह अभेदकी पराकाष्ठा है। उसमें वहाँसे भगवान् धक्का देनेपर भी नहीं जायँगे। कहीं यह गुणकी और स्वरूपकी बातें बहुत दूर ही रह जाती हैं। कानून पास न करना पड़े कि भगवान् यहाँ नहीं आ जैसे राजाके नौकर-चाकर बाहर ही रह जाते हैं। सकते, वार्तालाप समाप्त हो जाय तब आ सकते हैं। गोपियोंका भगवान्में माधुर्यभाव है। यह जो भगवान् वहाँ संकोचमें पड़ जाते हैं। भक्त भगवान्पर उपर्युक्त उच्च श्रेणीकी बात है, वहाँ गोपियाँ तो पहरा विजय कर लेता है। यह विजय पानेका असली साधन देती हैं। वहाँ प्रभाव, गुण कुछ भी नहीं है और जहाँ है। प्रभाव तथा गुणोंको लेकर प्रेम है, वहाँ तो वह मानता भगवान् और भक्त—ये शब्द यहाँके हैं। वहाँ तो है कि भगवान् महत्त्वपूर्ण नहीं हैं, प्रभाव ही महत्त्वपूर्ण एक-दूसरेकी दृष्टिमें दोनों ही भगवान् और दोनों ही है। गुण समझकर प्रेम करना तो पातिव्रतसे भी नीचा है। भक्त हैं। वह तो एक अलौकिक बात है। मिलनेके वह गुणी समझकर प्रेम नहीं करता। कैसा भी हो, अपना पूर्वकी चेष्टा है। उदाहरणमें राम-भरत-मिलापको ले काम तो केवल प्रेम करना ही है। पूर्ण प्रेमकी जहाँ बात सकते हैं। तुलसीदासजी कहते हैं—'उसका वर्णन होती है, वहाँ जैसे दो हाथ हैं, ये कोई गुण समझकर वाणीद्वारा नहीं किया जा सकता।' राम-भरत मिलते हैं, प्रेम नहीं करते, वैसे भगवान्में और प्रेमीमें भी कोई पर वहाँ ऐसा मिलाप नहीं है। भगवान् ही भगवान्से भेद नहीं। भगवान्में कोई विशेषता नहीं है। वहाँ तो मिलें—यह मिलाप कितना विलक्षण है। भक्तकी चेष्टा तीनों चीजें एक हो जाती हैं। भगवान्, भक्ति और उत्तरोत्तर भगवान्के हृदयमें आह्लाद बढ़ानेवाली है। भक्त—ये तीनों एक हो जाते हैं। ऐसी परिस्थिति वहाँ भगवान्की चेष्टा भक्तके आह्लादको बढ़ानेवाली है। उन हो जाती है। दोनोंका मिलन हाथ बढ़ाकर मिलनेसे बहुत ही विलक्षण इतनी बातें कही गयीं, फिर भी रुपयेमें एक पैसा है। उस समय सारे अंग-प्रत्यंग प्रेमकी मूर्ति धारण कर भी नहीं कही गयी। वास्तवमें जो बातें हैं, वह समुद्रके लेते हैं। अंगी, अंग, चेष्टा—सब एक प्रेममय हो जाते समान हैं, मनमें जो बातें आयीं, वे बूँदके समान हैं और हैं। एक हो जाते हैं। वह मिलन चित्रित करके वाणीसे वाणी तो परमाणुमात्र है। जन्मभर भी कहा जाय तो एक कहा जा सके, यह असम्भव है। अंग, प्रत्यंग और चेष्टाएँ सारी चीजें एक प्रेममय बुँद भी पूरी नहीं हो सकती। असलमें हमलोगोंका जीवन इस चर्चामें ही बीते। हो जाती हैं। वहाँ प्रेम नहीं रहता। भगवान् और भक्त न भगवान्के मिलनेकी जरूरत है, न और कुछ। बस, दोनोंकी एक दशा हो जाती है, वे भी भिन्न नहीं रहते। इस प्रकार जीवन बीते। मिलनेकी तथा मुक्तिकी अथवा हमलोगोंका प्रेम जड़ है, किंतु वहाँका प्रेम भी चेतन है। परिस्थितिके लिये भी इच्छा न करे। यद्यपि यह अच्छी वहाँके प्रेमी प्रेममय हैं। वहाँ धर्मी और धर्म नहीं है। वहाँ है, पर इससे भी बढकर इसके साधनको माने। सिद्धावस्था तो केवल एक धर्मी है। वह विशुद्ध प्रेम है। प्रेम ही तो अपने-आप होगी। पर उसको लक्ष्य करके साधन भगवान् हैं, प्रेम ही भक्त है और प्रेम ही प्रेम है। करनेसे विलम्ब होगा। यह भावना भी न हो तो और कथनमात्रके ही तीन रूप हैं। ऊँचे दर्जेकी बात है। उससे भी हटकर इसे समझेंगे तो भगवान्की चेष्टा भक्तके आह्लादके लिये और भक्तकी भगवान्के आह्लादके लिये और प्रेमके लिये होती जल्दी सिद्धि होगी। भगवान्की प्राप्तिकी इच्छाकी अपेक्षा प्रेम-मार्गमें है, परंतु वहाँ भी आगे जाकर आह्लाद और प्रेमकी अलग चलते रहें और प्राप्तिकी इच्छा न करें तो भगवान् जल्दी व्याख्या समाप्त हो जाती है और भगवान् तथा भक्तकी मिलेंगे। यह भी इच्छा न रहे तो और अच्छा। भी अलग व्याख्या नहीं रहती, सब एक ही हो जाते हैं।

सौ करोड रुपयोंका दान संख्या १२] समझनेके लिये चाहे जो कहें। यहाँ वेदान्तकी एकता है, तब क्या समझाया जाय। वहाँ तो सारी बात एक नहीं है, वह ज्ञानका मार्ग है और उसीकी प्रधानता है। केवल विशुद्ध प्रेम है। भगवान् ही प्रेम हैं, प्रेम ही यहाँ प्रेमकी प्रधानता है। इसका फल कोई भी नहीं भगवान् हैं। राधिकाजी कृष्ण हैं, कृष्ण ही राधिका हैं। बतला सकता। जिसे वह प्राप्त होता है, वही जान यह एकताकी स्थिति सबसे ऊँची है। ऐसी स्थिति जिसकी हो गयी, उसे कुछ भी करना-कराना नहीं सकता है। 'जान सकता है'—यह भी कहनेके लिये ही है, वस्तुत: यह भी कहा नहीं जा सकता। जानता क्या रहता। उसके शरीरकी क्या अवस्था हो जाती है, है ? वह तो हो ही जाता है। क्या हो जाता है ? होनेपर बतलायी नहीं जा सकती। दर्पणमें सूर्य नहीं आता, बिम्ब ही जाना जा सकता है। उसका उपाय क्या है? आता है। हमलोगोंकी दृष्टिमें उसका शरीर प्रेममय हो जाता है। जैसे सूर्यके प्रकाशसे दर्पण चमचमाने लगता उपाय यही है जो हम कर रहे हैं। जैसे भगवान्की माधुर्य-भक्तिमें श्रीराधिकाजी आह्लादिनी शक्ति हैं, आनन्दमय है, इसी प्रकार वह साक्षात् प्रेमकी मूर्ति हो जाता है। जैसे ब्रह्म साक्षात् श्रीकृष्णको आह्लादसे नचानेवाली हैं। कोई कस्तूरी लेकर चले, तो उसकी सुगन्धके परमाणु आनन्दमयी भक्ति एक हुई और प्रेममयी एक हुई। फैल जाते हैं, चाहे किसीकी नासिका खराब हो तो भले भगवान्को श्रीराधिका आनन्द देनेवाली होनेसे आनन्दमयी ही उसे गन्ध न आये। इसी प्रकार वह चलता है तो शक्ति हुईं और भगवान् हुए प्रेममयी शक्ति। जहाँ प्रेमका वितरण करता हुआ चलता है। कहते हैं-गौरांग भगवान् श्रीराधिकाजीको आनन्द देते हैं, वहाँ वे आनन्दमयी महाप्रभु चलते थे तो सब मार्ग प्रेममय हो जाते थे। उनके शक्ति हैं और श्रीराधिकाजी प्रेममयी। शरीरकी दशा बेदशा हो जाती थी, जिसे देखकर लोग प्रेमी हो जाते थे। ऐसा प्रेमी तो प्रेमका समूह होता है। गौडीय सम्प्रदायवाले कहते हैं-दोनोंकी एकतासे ही गौरांग महाप्रभ् हुए हैं। दोनोंकी एकता लक्षणोंसे नहीं उसे देखकर, स्पर्शकर ही लोग प्रेममय हो जाते हैं, समझायी जा सकती। वहाँ कोई लक्षण, धर्म-गुण नहीं उनकी ऐसी अलौकिक बात है। सौ करोड़ रुपयोंका दान प्रेरक प्रसंग-(श्रीमहावीरप्रसादजी नेवटिया) डोंगरेजी महाराज कथासे ही करीब एक अरब रुपये दान कर चुके होंगे, वे ऐसे कथावाचक थे।

गोरखपुरके कैंसर अस्पतालके लिये एक करोड़ रुपये उनके चौपाटीपरके अन्तिम प्रवचनसे जमा हुए थे।

उनकी पत्नी आबूमें रहती थी, जब उनकी मृत्युके पाँचवें दिन उन्हें खबर लगी, तब वे अस्थियाँ लेकर गोदावरीमें विसर्जित करने मुम्बईके सबसे बड़े आदमी रित भाई पटेलके साथ गये थे। नासिकमें डोंगरेजीने

रति भाईसे कहा कि 'रति, हमारे पास तो कुछ है नहीं, और इसका अस्थि-विसर्जन करना है। कुछ तो लगेगा ही, क्या करें?' फिर कहा—'हमारे पास इसका मंगलसूत्र एवं कर्णफूल हैं, इन्हें बेचकर जो रुपये मिलें, उन्हें

अस्थि-विसर्जनमें लगा देते हैं।'

यह बात बताते हुए रित भाईने कहा, 'जिस समय हमने सुना, हम जीवित कैसे रह गये, आपसे कह नहीं सकते। बस, हमारा हार्ट फेल नहीं हुआ। जिन महाराजश्रीके इशारेपर लोग कुछ भी करनेको तैयार रहते

थे, वह महापुरुष कह रहा है कि स्त्रीकी अस्थियोंके विसर्जनके लिये पैसा नहीं है और हम सामने खड़े सुन

रहे हैं ? हम फूट-फूटकर रो पड़े। धिक्कार है हमें और धन्य है भारतवर्ष, जहाँ ऐसे वैराग्यवान् महापुरुष जन्म लेते हैं।'

'मानस पुन्य होहिं नहिं पापा' (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)

लाभ नहीं कर सकता, भगवदाश्रित होकर भगवद्दत्त साधनोंका

कलियुगका यह पुनीत प्रताप है कि इसमें मानस

पुण्यकर्मोंका फल होता है, पापकर्मोंका नहीं, परंतु इन वचनोंका आलम्बन करके सब कुछ कर सकता हूँ, ऐसा निश्चयवान्

आशय और है। यदि मनसे होते रहेंगे, अर्थात् मानस कर्मका प्राणी पुरुषार्थलाभ कर सकता है। इसलिये श्रुति प्रोत्साहन

देती है—'उत्थातव्यं जागृतव्यं योक्तव्यं भृतिकर्मस्।

अभ्यास हो जायगा, तब देहेन्द्रियादिसे भी पापकर्म अवश्य

ही हो जायँगे। अत: मनसे सर्वदा पापकर्मीका परित्याग और भविष्यतीत्येव मनः कृत्वा सततमव्यथैः॥' यदि अनुष्ठान

अच्छे कर्मोंका अनुष्ठान करना चाहिये, इससे बुरे कर्म होनेका

अवकाश न रहेगा, शुद्ध कर्म ही शरीरसे भी होने लगेगा।

'मानस पुण्य होता है'—यह कहनेका प्रयोजन यही है कि

प्राणीके मनसे पुण्यकर्म किया जाय, जिससे देहेन्द्रियादिसे निर्माण कर लिया है। परमेश्वरका ज्ञान या संकल्प ही उनका तप समझा जाता है। उनके ज्ञानरूप तपसे ही विश्व

भी पुण्यकर्म होने लग जायँ और 'मानस पाप नहीं होता'—

यह कहनेका भी प्रयोजन यह है कि यदि असावधानीसे

कुछ मानस पाप हो जाय तो भी देहेन्द्रियादिसे उन कर्मोंको

न होने दे। ऐसा न समझ ले कि मनसे कर्म होनेपर पाप हो

ही गया, फिर अब शरीरसे भी क्यों न कर लिया जाय; किंतु

यह समझना उचित है कि पुण्य मानस भी होता है, अत: उसका संकल्प चलाये और पाप मानस नहीं होता, अत:

यदि कथंचित् असावधानीसे मनद्वारा बुरा कर्म हो गया, तो

भी देहादिसे बुरे कर्म न होने देकर बड़ी सावधानीसे मनद्वारा

भी बुरे कर्मोंको न होने दे। यदि मानस पापकर्म करता रहेगा, तो अभ्यास बढ़ जानेपर न चाहते हुए भी बुरे कर्मोंको भी

करना ही पड़ेगा। जैसे गमनजन्य वेगके बढ़ जानेपर गमनक्रियामें

स्वतन्त्र गन्ताकी भी स्वतन्त्रता तिरोहित हो जाती है, वैसे ही मननजन्य वेगके बढ जानेपर मननक्रियामें स्वतन्त्र मन्ताकी भी मननमें स्वाधीनता छिप जाती है। इतना ही नहीं; किंतु

पराधीनताका भी स्पष्ट अनुभव होने लगता है। इसी तरह

बुरे कर्मींके संकल्पोंके धाराबद्ध हो जानेपर उनका रोकना अपने वशमें नहीं रहता। इसलिये अच्छे कर्मींके संकल्पको

चलाना और बुरे कर्मोंके संकल्पोंको रोकना परमावश्यक है। संकल्प ही विश्वका मूल है, उसीपर उन्नति, अवनति—

दोनों निर्भर है। इसीलिये शास्त्रोंने बार-बार उत्तम विचार

और दृढ़ संकल्पकी महत्ता गायी है। बन्ध-मोक्षमें भी भावनाको

ही प्रधानता दी गयी है। अपनेको कर्ता, भोक्ता, सुखी-दुखी,

बद्ध माननेवाला प्राणी बद्ध रहता है और अपनेको नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त माननेवाला प्राणी मुक्त हो जाता है। मैं कुछ

ही लीन सम्पूर्ण विश्व उचित कारण-कलापोंसे प्रकट हो जाता है। जैसे मिट्टी या सुवर्णके होनेपर ही घट, शरावादि

और कटक, मुकुट, कुण्डलादि हो सकते हैं, अन्यथा नहीं,

वैसे ही संकल्पके रहनेपर ही विश्वकी उपलब्धि होती है।

जब मनकी हलचल है, तभी द्वैत है। मनकी हलचल न होनेपर विश्वका पता नहीं लगता। संकल्पकी अनेकरसतासे

ही विश्वकी अनेकरसता भी अनुभूत होती है। इसलिये यद्यपि कहीं विश्वको अव्यय और सनातन कहा गया है—

'एषोऽश्वत्थः सनातनः''अश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।' तथापि विश्वकी क्षणभंगुरता अबाधित ही रहती है। कूटस्थ,

नित्य, केवल एक आत्मा ही है। परिणामी पदार्थ प्रवाहरूपसे ही नित्य है। पूर्वरूप-परित्यागपूर्वक रूपान्तरापत्ति ही परिणाम

है। अत: परिणामी पदार्थ कूटस्थरूपसे नित्य कदापि नहीं हो सकते, स्थूल जगत्में कभी-कभी हिमालयके स्थानमें

समुद्र, समुद्रके स्थानमें हिमालय हो जाता है। मरुस्थानमें गंगा और गंगाके स्थानमें मारवाड़ दिखने लगता है। संकल्प

न भी हो सके तो भी सत्संकल्प परम लाभदायक होते हैं।

होता है। विभिन्न योगियोंने अपने संकल्पसे विश्वका

बन जाता है। उसी तरह वसिष्ठ आदि महर्षियोंने भी

संकल्परूप तपस्यासे विश्वनिर्माणका अनुभव किया था।

संकल्पकी विचित्रतासे ही जगतुकी विचित्रता होती है।

संकल्प ही बाह्य प्रपंचके रूपमें प्रकट होता है। जैसे

काष्ठके भीतर विविध पुत्रिका विद्यमान रहती है, वही

कारक-व्यापारसे प्रकट होती है, वैसे ही मनके संकल्पमें

ईश्वर और योगीका संकल्प विचित्र सामर्थ्यसम्पन्न

या भावनाकी शुद्धतासे ही प्राणियोंकी शुद्धि और भावनाकी ही अपवित्रतासे अपवित्रता होती है। अत: हमें आज सबसे

भीनाहींक्लाडम्मन्गांडरुक्नुन्डिन्ग्रहीन्।स्मुप्डी:सर्वेडट.पुकुपर्यात्रकानकी आन्त्रस्थातम् एक्निम्, एक्नुनेक्नुनेक्नुनेक्निक्रहोत्।

संख्या १२] सच्ची तीर्थयात्रा

सच्ची तीर्थयात्रा एक संत किसी प्रसिद्ध तीर्थस्थानपर गये थे। वहाँ एक दिन वे तीर्थस्नान करके रातको मन्दिरके पास सोये

थे। उन्होंने स्वप्नमें देखा—दो तीर्थदेवता आपसमें बातें कर रहे हैं। एकने पूछा— 'इस वर्ष कितने नर-नारी तीर्थमें आये?'

'लगभग छ: लाख आये होंगे।' दूसरेने उत्तर दिया।

'क्या भगवानुने सबकी सेवा स्वीकार कर ली?'

'तीर्थके माहात्म्यकी बात तो जुदा है; नहीं तो उनमें बहुत ही कम ऐसे होंगे, जिनकी सेवा स्वीकृत हुई हो।' 'ऐसा क्यों?'

'इसीलिये कि भगवानुमें श्रद्धा रखकर पवित्र भावसे तीर्थ करने बहुत थोडे लोग आये। जो आये, उन्होंने

भी तीर्थोंमें नाना प्रकारके पाप किये।' 'कोई ऐसा भी मनुष्य है जो कभी तीर्थ नहीं गया, परंतु जिसको तीर्थींका फल प्राप्त हो गया और जिसपर

प्रभुकी प्रसन्नता बरस रही हो?'

'जूते बनाकर बेचता हूँ, महाराज!' रामूने उत्तर दिया।

'तुमने कभी तीर्थयात्रा भी की है?' 'नहीं महाराज! मैं गरीब आदमी तीर्थयात्राके लिये पैसा कहाँसे लाता? तीर्थका मन तो था परंतु जा

'तुमने और कोई बड़ा पुण्य किया है?' 'ना महाराज! मैं गरीब पुण्य कहाँसे करता?'

तब संतने अपना स्वप्न सुनाकर उससे पूछा—'फिर भगवान्की इतनी कृपा तुमपर कैसे हुई?'

'भगवान् तो दयाल् होते ही हैं, उनकी कृपा दीनोंपर विशेष होती है।' (इतना कहते-कहते वह गद्गद हो गया), फिर बोला—'महाराज! मेरे मनमें वर्षोंसे तीर्थयात्राकी चाह थी। बहुत मुश्किलसे पेटको खाली रख-

रखकर मैंने कुछ पैसे बचाये थे, मैं तीर्थयात्राके लिये जानेवाला ही था कि मेरी स्त्री गर्भवती हो गयी। एक

दिन पडोसीके घरसे मेथीकी सुगन्ध आयी, मेरी स्त्रीने कहा—'मेरी इच्छा है मेथीका साग खाऊँ, पडोसीके यहाँ बन रहा है, जरा माँग लाओ।' मैंने जाकर साग माँगा। पड़ोसिन बोली—'ले जाइये, परंतु है यह बहुत अपवित्र।

हमलोग सात दिनोंसे सब-के-सब भूखे थे, प्राण जा रहे थे। एक जगह एक मुर्देपर चढ़ाकर साग फेंका गया

नहीं सका।'

था, वहीं मेरे पति बीन लाये। उसीकों मैं पका रहीं हूँ।' (रामू फिर गद्गद होकर कहने लगा) 'मैं उसकी बात सुनकर काँप गया। मेरे मनमें आया, पड़ोसी सात-सात दिनोंतक भूखे रहें और हम पैसे बटोरकर तीर्थयात्रा

करने जायँ। यह तो ठीक नहीं है। मैंने बटोरे हुए सब पैसे आदरके साथ उनको दे दिये। वह परिवार अन्न-वस्त्रसे सुखी हो गया। रातको भगवान्ने स्वप्नमें दर्शन देकर कहा—'बेटा! तुझे सब तीर्थोंका फल मिल गया,

आँखोंके सामने ही निरन्तर देखा करता हूँ और बड़े आनन्दसे दिन कट रहे हैं।' रामूकी बात सुनकर संत रो पड़े। उन्होंने कहा—'सचमुच तीर्थयात्रा तो तैने ही की है।'

कई होंगे, एकका नाम बताता हूँ, वह है रामू। यहाँसे बहुत दूर केरल देशमें रहता है।

इतनेमें संतकी नींद टूट गयी। उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ और इच्छा हुई केरल देशमें जाकर भाग्यवान् रामूका दर्शन करनेकी। संत उत्साही और दृढ़निश्चयी तो होते ही हैं, चल दिये और बड़ी कठिनतासे केरल पहुँचे। पता लगाते-लगाते एक गाँवमें रामुका घर मिल गया। संतको आया देख वह बाहर आया। संतने पूछा—'क्या करते हो भैया?'

तुझपर मेरी कृपा बरसेगी।' 'महाराज! तबसे मैं सचमुच सुखी हो गया। अब मैं तीर्थस्वरूप भगवानुको अपनी

अनन्यताकी महत्ता (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) अल्प है, वह भगवान् नहीं, ब्रह्म नहीं और यदि हम प्रश्न है कि भगवत्प्रेमके पथमें अनन्यताकी कितनी

महत्ता है ? तो सारी अनन्यताकी ही महत्ता है, लेकिन

उसमें एक बात है, जितने भी अपने इष्टके अतिरिक्त दूसरे रूप हैं और जिनको दूसरे साधक इष्ट मानते हैं, प्रेम करते हैं, उनमें न तो हीनताका भाव करे, न उनको दूसरा माने और न उनको भजे-फिर कैसे

करे? जैसे एक आदमी भगवान् रामचन्द्रका उपासक है, एक आदमी भगवान् शंकरका उपासक, एक आदमी भगवान् श्रीकृष्णका उपासक है और एक आदमी निर्गुण ब्रह्मका उपासक है। तो वह रामका उपासक क्या समझे? रामका उपासक ये भी न समझे कि ब्रह्म, शिव और कृष्ण—ये उससे अलग हैं और

ये भी न समझे कि ये उससे नीचे हैं और ये भी न समझे कि अलग-अलग हैं और ये भी न समझे कि हमको इनकी उपासना करनी चाहिये-तो क्या समझे? वह यह समझे कि हमारे ही राम, हमारे ही राघवेन्द्र वहाँपर श्रीकृष्ण बने हुए हैं और श्रीकृष्णके नामसे पूजनेवाले हमारे रामको ही पूजते हैं, वहाँ हमारे राम शिव बने हुए हैं और शिवके उपासक शिवरूपसे हमारे ही रामको पूजते हैं, वहाँ हमारे राम निर्गुण ब्रह्म

बने हुए हैं और निर्गुण ब्रह्मके उपासक हमारे ही रामकी उपासना कर रहे हैं। इसलिये न तो वे अलग हैं, न वे छोटे हैं और जो हमारे ही राम हैं, हमें जो रूप प्यारा, जिसकी हम उपासना करते हैं—उसकी हम क्यों न करें? जरा सोचिये, क्या वे अलग-अलग हैं ? जरा सोचिये, भगवान् सौ-पचास नहीं होते, सत्य एक है, भगवान एक है, परंतु यदि हम अपने भगवानुके

सिवाय दूसरे सबके उपास्य भगवान्को भगवान् नहीं

मानते तो हमारे भगवान् हमारी छोटी-सी सीमाके

अन्दर बद्धमूल होकर अल्प बन जाते हैं और जो

उन सबको अलग-अलग भगवान् मानते हैं, तो इतने भगवान् हो जाते हैं कि सभी छोटे हो गये। तब वे भी भगवान् नहीं रहे और अगर हम उपासनाको बदलते हैं तो हम कहींपर जाकर टिकते नहीं, तो भी

हमारे लिये अनन्यता नहीं रही और पागलपन हो गया और यदि हम उन्हें छोटा-बड़ा मानते हैं, तो वे हमारेवालेको छोटा मानेंगे और हम उनकेवालेको छोटा मानेंगे-तो हमने भगवान्को छोटा कर दिया। इसलिये अनन्यताका अर्थ ये है कि दूसरेके भगवान् हमारे भगवान्से अलग नहीं, दूसरेके भगवान्

भाग ८९

हमारे भगवान्से छोटे नहीं, दूसरेके भगवान् हमारे ही भगवान् हैं और दूसरेके भगवान् उस रूपमें हमारे उपास्य नहीं; इस प्रकारसे अन्य इष्टोंके प्रति भाव करे और एक बात इसमें और है कि सन्तोंमें क्या भाव करे? ऐसी बात है कि सन्त सभी भगवद्रप हैं, अगर सन्त हैं। यों तो सन्तकी बात क्या, नरकका कीड़ा भी भगवद्रप है, इसमें कोई सन्देह नहीं कि नरकके कीड़ेसे भी घृणा न करे, नरकका कीट भी हमारे लिये

सबके सब भगवद्रुप 'यत्किञ्च भृतं प्रणमेदनन्यः' सबको अनन्य भावसे प्रणाम करें। अब रही सन्तकी बात, तो सन्तमें जिस सन्तका जो अनुगत हो, सन्तमें भगवद्बद्धि करना, गुरुमें भगवद्बद्धि करना पाप नहीं, पर गुरु कहीं अपनेको भगवान् बताकर बोले कि भगवानुको तो हटा दो और हमको बैठा लो यहाँपर, तो ये जरा सावधानीकी चीज है।

यहाँपर तो सावधान होना चाहिये, ऐसी बात ये कह

क्यों रहा है? सन्तके अनुगत हो, अपने सन्तके अनुगत हो, उसका कहा मानो, उस गुरुके मनके

पूज्य है। भगवान्के नाते **'बंदइ सभी भगवान्के**

नाते' जितने भी जगत्में चराचर भूत प्राणी हैं, वे

संख्या १२] अनन्यताकी महत्ता अनुसार करे, पर दूसरे सन्तोंमें अवज्ञा-बुद्धि न करे। क्योंकि पेशा तो उपदेशकका मैं भी कर रहा हूँ; पर एक सन्त आये हमारे यहाँ, हम तो ऐसे कसौटी कस नालायक उपदेशक हूँ, ऐसी चीज है। तो उसका तो लेते हैं। एक सन्त मान लीजिये आये और उनको अधिकार नहीं, इसलिये किसी भी भगवदुस्वरूपमें सर्दी लग रही थी। उन्होंने कहा—'हमें तो चाय पीनी और किसी भी सन्तमें अवज्ञा-बुद्धि न करे। भगवान्में है और चायमें जरा-सा अदरक डाल देना।' बोले ये दोषबुद्धि कभी होनी नहीं, चाहे वे शिव हों, राम हों, तो आसक्तिवाले हैं, ये विषयासक्तिवाले सन्त हैं। अब विष्णु हों, चाहे श्रीकृष्ण हों या देवी हों—सन्तोंमें इस प्रकारसे हम सन्तको तौलेंगे तो भगवान् भी शायद दोषबुद्धि हमारी हो सकती है कभी? वहाँपर सन्तको हमारी प्रेरणामें न जँचे, समझे! तो सच्ची बात ये कि दोषी न बताकर अपनेको बचा ले, अपनेको अलग रखे। अपनेको दोषका ग्रहण यदि कोई घरका भी सन्तको तौलने न जाय, हो सकता है कहीं धोखा भी हो, पर अगर हमारी ठीक सन्तबुद्धि है तो धोखेसे कहे, तब भी न करे, माता-पिताकी आज्ञा माननी हमको भगवान् बचा लेंगे, जान-बूझकर धोखेमें हम सर्वथा उचित है, पतिकी आज्ञा मानना पत्नीके लिये पड़े हैं, तो यह वही होगा कि वहाँ कहीं-न-कहीं सर्वथा उचित है, पर वहाँ उसके दो भेद होते हैं-हमारा भी व्यक्तिगत स्वार्थ होगा, छिपा हुआ भी। एक तो होता है वह बहुत कम होता है, वह वैसी भई! सन्तके साधनसे हमको पूजा मिलेगी, मान मिलेगा, स्थिति कि जहाँ माता-पिता, पित, गुरु जो कुछ भी भोग मिलेगा तो क्यों न समर्थन करे? वहाँ तो वह कह दें, वे भगवद्वाक्य हैं—ऐसी बुद्धि। वहाँ तो और चीज होती है और जहाँ हम अच्छा-बुरा सोचते हैं, दोषी है और यदि वह ठीक-ठीक सन्त मानता है तो पाषाणमें — पत्थरमें हम भगवान्को मानकर भगवान्को अच्छा-बुरा सोचनेके लिये हमारा ब्रेन काम करता है, पा लेते हैं, किसी चेतनमें चाहे उसके आचरण कैसे वहाँपर हमें पिता भी कहे कि तुम खून कर दो अमुकका, पति पत्नीसे कहे कि तुम व्यभिचार करो भी हों, हम अगर भगवान्को मानेंगे, तो वे अपने आचरणोंसे भले ही दूषित हों, पर हमारे लिये उसमें तो उसकी बात न माने। वहाँतक बात माननेमें आपत्ति भगवान् प्रकट हो जायेंगे, इसमें कोई सन्देहकी बात नहीं, जहाँतक आज्ञा और सम्मित देनेवाले का बुरा न नहीं, यह श्रद्धा-विश्वास अपनी बात है। होता हो, अपना बुरा हो जाता हो, पर जिस आज्ञाके पालन करनेमें आज्ञा देनेवालेके लिये भी अशुभ फल किसीको तौले नहीं, जहाँ दोष दिखे, वहाँ अपने अलग हो जाय और अपनी कसौटी ये करे, बड़ी सुन्दर पैदा होता है, वह आज्ञा गुरुकी भी न माने तो कोई कसौटी है, सार्वभौम-जिसके संगसे हमारे अन्दर आपत्तिकी बात नहीं। बुरी बात किसीकी भी न माने, इसमें कोई आपत्तिकी बात नहीं, परंतु किसीमें दोषबुद्धि भगवद्भावकी वृद्धि होती हो, दैवीय-सम्पत्ति बढ़ती हो, तो भगवानुका आश्रय करके अपने सन्तके अनुगत रहे न करे, अवज्ञा-बुद्धि न करे, अगर न दिखे अपनेको तो योगदर्शनके अनुसार उपेक्षा-बुद्धि कर ले, मैत्री-और दूसरे सन्तोंकी समालोचना न करे। तेरे भावे जो करो, ये भलो बुरो संसार। करुणा-मुदिता जहाँ न बैठती हो, वहाँ उपेक्षा करे,

उससे अलग रहे, अपनेको बचाये रखे और यदि पास नारायण तू बैठकर, अपनो भवन बुहार॥ साधकके लिये आवश्यक है, अब जो प्रचारक चला जाय तो भगवद्बद्धि करे। इसमें अपना लाभ है। मेहतरमें हम भगवद्बद्धि करें तो सचमुच मेहतर हमारे हैं, आचार्य हैं—उनकी बातें वे जानें। उनकी बात कहनेका, समालोचना करनेका हमें अधिकार नहीं; लिये भगवान् है, इसमें कोई सन्देहकी बात नहीं।

- सनातन धर्मके अकाट्य मन्त्र-प्रयोग-(ब्रह्मलीन अनन्तश्रीविभूषित पूर्वाम्नाय गोवर्धन-पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीनिरंजनदेवतीर्थजी महाराज)

'अच्युताय नमः, अनन्ताय नमः, गोविन्दाय

आदिचौरकफल्लस्य ब्रह्मदत्तवरस्य नमः '—

तस्य स्मरणमात्रेण चौरो विशति न गृहे॥ —इस मन्त्रका निरन्तर जप करनेसे हर प्रकारके सोते समय घरके ताले लगाते हुए इस मन्त्रके

रोग दूर हो जाते हैं। जबतक रोग न मिटे, श्रद्धापूर्वक स्मरणमात्रसे चोर घरमें आयेगा ही नहीं।

जप करता रहे। इस मन्त्रका सतत जप करते रहनेसे अगस्तिर्माधवश्चैव मुचुकुन्दो महाबलः।

असाध्य रोग भी दूर हो जाते हैं। यह अनुभूत प्रयोग है। कपिलो मुनिरास्तीकः पञ्चैते सुखशायिनः॥ यदि किसीको नींद न आती हो तो हाथ-पैर गच्छ गौतम शीघ्रं त्वं ग्रामेषु नगरेषु च।

आसनं भोजनं यानं सर्वं मे परिकल्पय॥ धोकर सोते समय इस मन्त्रका उच्चारण करते रहें। दो-—इस मन्त्रका जप करनेसे सभी तरहसे साधन तीन दिन प्रयोगके बाद ही शीघ्र सुखद निद्रा आने

सुलभ होकर यात्रा सुखद होती है। लगेगी।

सर्पापसर्प भद्रं ते गच्छ सर्प महाविष। वाराणस्यां दक्षिणे तु कुक्कुटो नाम वै द्विजः। जनमेजयस्य यज्ञान्ते आस्तीकवचनं स्मर॥ तस्य स्मरणमात्रेण दुःस्वप्नः सुखदो भवेत्॥

आस्तीकवचनं स्मृत्वा यः सर्पो न निवर्तते। यदि किसीको बुरे स्वप्न आते हों तो रात्रिमें हाथ-

शतधा भिद्यते मूर्धिन शिंशपावृक्षको यथा॥

रात्रिमें सोते समय इस मन्त्रको कहकर और तीन

जब कभी सर्प दिखलायी दे, उसी समय इस प्रतिदिन इस मन्त्रका १०८ बार जप करे, दु:स्वप्न बन्द मन्त्रको जोरसे सर्पके सामने कहना चाहिये। इसे सुनते हो जायँगे तथा उनके फल भी अच्छे होंगे।

पैर धोकर शान्त-चित्तसे पूर्वमुख आसनपर बैठकर

ही सर्प तत्क्षण लौट जायगा तथा किसीको नहीं अच्युतानन्तगोविन्दनामोच्चारणभेषजात् काटेगा। रात्रिमें सोते समय भी इस मन्त्रको कहा जाता

नश्यन्ति सकला रोगाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम्॥ है। इसे कण्ठस्थ कर लेना चाहिये। सभी प्रकारके रोगकी निवृत्तिके लिये उपर्युक्त

श्लोकका अधिकाधिक जप करे। जो लोग श्लोकका तिस्त्रो भार्याः कफल्लस्य दाहिनी मोहिनी सती।

पाठ करनेमें असमर्थ हों, वे 'अच्युताय नमः, अनन्ताय तासां स्मरणमात्रेण चौरो गच्छति निष्फलः॥

नमः, गोविन्दाय नमः।'—इन तीन मन्त्रोंका ही जप कफल्ल कफल्ल कफल्ल।

करें।

बार ताली बजाकर सोये। इससे चोरी नहीं होगी। सोनेसे या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता।

पूर्व द्वारकी साँकल बन्द करते समय भी यथाशक्ति नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ इसका जप करनेसे चोर आदि रात्रिमें आयेगा भी तो —इस मन्त्रका प्रतिदिन १०८ बार जप करनेसे

ञ्मोतखारोक छि। इसेरिन असेरिन https://dsc.gg/dhalkिनारिका विकास कि कि Avinash/Sh

संख्या १२] साधकोंके प्रति— साधकोंके प्रति— [धर्मका सार] (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) उसकी सबको आवश्यकता रहती है। आदमी किसे नहीं श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्॥ चाहता ? जो स्वार्थी होता है, मतलबी होता है, दूसरोंकी आत्मनः प्रतिकुलानि परेषां न समाचरेत्। हानि करता है, उसे कोई नहीं चाहता; परंतु जो तनसे, (पद्मपुराण, सृष्टि० १९।३५५-३५६) धर्मसर्वस्व अर्थात् पूरा-का-पूरा धर्म थोडे़में कह मनसे, वचनसे, धनसे, विद्यासे, योग्यतासे, पदसे, अधिकारसे दिया जाय तो वह इतना ही है कि जो बात अपने दूसरोंका भला करता है, जिसके हृदयमें सबकी सहायता प्रतिकूल हो, वह दूसरोंके प्रति मत करो। इसमें सम्पूर्ण करनेका, सबको सुख पहुँचानेका भाव है, उसे सब लोग शास्त्रोंका सार आ जाता है। जैसे, आपका यह भाव चाहने लगते हैं। जिसे सब लोग चाहते हैं, वह अधिक रहता है कि प्रत्येक आदमी मेरी सहयाता करे, मेरी रक्षा सुखी रहता है। कारण कि अभी अपने सुखके लिये करे, मुझपर विश्वास करे, मेरे अनुकूल बने और दूसरा अकेले हमीं उद्योग कर रहे हैं तो उसमें सुख थोड़ा कोई भी मेरे प्रतिकूल न रहे, मुझे कोई ठगे नहीं, मेरी होगा, पर दूसरे सब-के-सब हमारे सुखके लिये उद्योग कोई हानि न करे, मेरा कोई निरादर न करे, तो इसका करेंगे तो हम सुखी भी अधिक होंगे और लाभ भी अर्थ यह हुआ कि मैं दूसरेकी सहायता करूँ, दूसरेकी अधिक होगा। रक्षा करूँ, दूसरेपर विश्वास करूँ, दूसरेके अनुकूल बनूँ सब-के-सब हमारे अनुकूल कैसे बनें? कि हम

और किसीके भी प्रतिकूल न रहूँ, किसीको ठगूँ नहीं, किसीको कोई हानि न करूँ, किसीका निरादर न करूँ, आदि-आदि। इस प्रकार आप स्वयं अनुभवका आदर मेरी कोई हानि न करे-यह अपने हाथकी बात

करें तो आप पूरे धर्मात्मा बन जायँगे। नहीं है, पर मैं किसीकी हानि न करूँ—यह अपने हाथकी बात है। सब-के-सब मेरी सहायता करें-यह मेरे हाथकी बात नहीं है, पर इस बातसे यह सिद्ध होता है कि मैं सबकी सहायता करूँ। मेरे साथ जिन-जिनका काम पड़े, उनकी सहायता करनेवाला मैं बन जाऊँ। मुझे कोई बुरा न समझे-इससे यह शिक्षा लेनी चाहिये कि मैं किसीको बुरा न समझूँ। यह अनुभवसिद्ध बात है।

ही धर्मका अनुष्ठान है। ऐसा करनेवाला पूरा धर्मात्मा

बन जाता है। जो धर्मात्मा होता है, उसे सब चाहते हैं,

किसीके भी प्रतिकूल न बनें, किसीके भी विरुद्ध काम न करें। अपने स्वार्थके लिये अथवा अभिमानमें आकर हम दूसरेका निरादर कर दें, तिरस्कार कर दें, अपमान कर दें और दूसरेको बुरा समझें तो फिर दूसरा हमारा आदर-सम्मान करे, हमें अच्छा समझे—इसके योग्य हम नहीं हैं। जबतक हम किसीको बुरा आदमी समझते हैं;

तबतक हमें कोई बुरा आदमी न समझे—इस बातके हम

होनेवाली नहीं थी, उस परमात्माके रहते हुए दूसरा

हमारी वह हानि कैसे कर देगा? हमारी तो वही हानि

हकदार नहीं होते। इसके हकदार हम तभी होते हैं, जब हम किसीको बुरा न समझें। अब कहते हैं कि बुरा कैसे न समझें ? उसने हमारा बुरा किया है, हमारे धनकी हानि की है, हमारा अपमान किया है, हमारी निन्दा की है! तो इसपर आप थोड़ी गम्भीरतासे विचार करें। उसने कोई भी मुझे बुरा न समझे—यह अपने हाथकी बात हमारी जो हानि की है, वह होनेवाली थी। हमारी हानि नहीं है, पर मैं किसीको बुरा न समझूँ यह अपने न होनेवाली हो और दूसरा हमारी हानि कर दे—यह तो हाथकी बात है। जो अपने हाथकी बात है, उसे करना हो ही नहीं सकता। परमात्माके राज्यमें हमारी जो हानि

भाग ८९ हुई, जो अवश्यम्भावी थी। दूसरा उसमें निमित्त बनकर बोले कि यह आवाज तो पण्डितजीकी है! पण्डितजी यहाँ कैसे आये! उन्होंने राजासे कहा कि 'महाराज! पापका भागी बन गया; अत: उसपर दया करनी चाहिये। पण्डितजी तो कुएँमेंसे बोल रहे हैं।' राजा वहाँ गया। यदि वह निमित्त न बनता तो भी हमारी हानि होती, हमारा अपमान होता। वह स्वयं हमारी हानि करके, रस्सा डालकर उन्हें कुएँमेंसे निकाला, तो देखा कि उनके दोनों हाथ कटे हुए हैं। उनसे पूछा गया कि यह हमारा अपमान करके पापका भागी बन गया, तो वह भूला हुआ है। भूले हुएको रास्ता दिखाना हमारा काम कैसे हुआ? तो वे बोले कि 'भाई! देखो, जैसा हमारा है या धक्का देना ? कोई खड्ढेमें गिरता हो तो उसे बचाना प्रारब्ध था, वैसा हो गया।' उनसे बहुत कहा गया कि हमारा काम है या उसे धक्का देना? अत: उस बेचारेको बताओ तो सही, कौन है, कैसा है; परंतु उन्होंने कुछ बचाओ कि उसने जैसे मेरी हानि की है, वैसे किसी नहीं बताया, यही कहा कि हमारे कर्मोंका फल है। राजा औरकी हानि न कर दे। ऐसा भाव जिसके भीतर होता उन्हें अपने घरपर ले गये। उनकी मलहम-पट्टी की, दवा है, वह धर्मात्मा होता है, महात्मा होता है, श्रेष्ठ पुरुष की और खिलाने-पिलाने आदि सब तरहसे उनकी सेवा होता है। की। 'गीत-गोविन्द' की रचना करनेवाले पण्डित जयदेव एक दिनकी बात है, जिन्होंने जयदेवके हाथ काटे थे, वे चारों डाकू साधुके वेशमें कहीं जा रहे थे। उन्हें एक बड़े अच्छे संत हुए हैं। एक राजा उनपर बहुत राजाने भी देखा और जयदेवने भी। जयदेवने उन्हें भक्ति रखता था और उनका सब प्रबन्ध अपनी ओरसे पहचान लिया कि ये वे ही डाकू हैं। उन्होंने राजासे ही किया करता था। जयदेवजी त्यागी थे और गृहस्थ होते हुए भी 'मुझे कुछ मिल जाय, कोई धन दे दे'— कहा कि 'देखो, राजन्! तुम धन लेनेके लिये बहुत ऐसा नहीं चाहते थे। उनकी स्त्री भी बड़ी विलक्षण आग्रह किया करते हो। यदि धन देना हो तो वे जो चारों पतिव्रता थी; क्योंकि उनका विवाह भगवान्ने करवाया आदमी जा रहे हैं, वे मेरे मित्र हैं, उन्हें धन दे दो। मुझे था, वे विवाह करना नहीं चाहते थे। एक दिनकी बात धन दो या मेरे मित्रोंको दो, एक ही बात है।' राजाको है, राजाने उन्हें बहुत-सा धन दिया, लाखों रुपयोंके रत्न आश्चर्य हुआ कि पण्डितजीने कभी आय्-भरमें किसीके दिये। उन्हें लेकर वे वहाँसे रवाना हुए और घरकी ओर प्रति 'आप दे दो' ऐसा नहीं कहा, पर आज इन्होंने कह चले। रास्तेमें जंगल था। डाकुओंको इस बातका पता दिया है! राजाने उन चारों व्यक्तियोंको बुलवाया। वे लग गया। उन्होंने जंगलमें जयदेवको घेर लिया और आये और उन्होंने देखा कि हाथ कटे हुए पण्डितजी वहाँ बैठे हैं तो उनके प्राण सुखने लगे कि अब कोई उनके पास जो धन था, वह सब छीन लिया। डाकुओंके मनमें आया कि यह राजाका गुरु है, कहीं जीता रह 'विपत्ति' आयेगी! अब ये हमें मरवा देंगे! राजाने उनके जायगा तो हमलोगोंको पकड्वा देगा। अतः उन्होंने साथ बड़े आदरका बरताव किया और उन्हें खजानेमें ले जयदेवके दोनों हाथ काट लिये और उन्हें एक सूखे गया। उन्हें सोना, चाँदी, मुहरें आदि खूब दिये। लेनेमें कुएँमें गिरा दिया। जयदेव कुएँके भीतर पड़े रहे। एक-तो उन्होंने खूब धन ले लिया, पर पासमें बोझ अधिक दो दिनके बाद राजा जंगलमें आया। उसके आदिमयोंने हो गया। अब क्या करें? कैसे ले जायँ? तब राजाने पानी लेनेके लिये कुएँमें लोटा डाला तो वे कुएँमेंसे बोले अपने आदिमयोंसे कहा कि इन्हें पहुँचा दो। धनको सवारीमें रखवाया और सिपाहियोंको साथमें भेज दिया। कि 'भाई! ध्यान रखना, मुझे लग न जाय। इसमें जल नहीं है, क्या करते हो?' उन लोगोंने आवाज सुनी तो वे जा रहे थे। रास्तेमें उन सिपाहियोंमें जो बडा

अधिकारी था, उसके मनमें आया कि पण्डितजी उनके मरनेसे पण्डितजी रोते हैं। उनसे पूछा कि किसीको कभी देनेके लिये कहते ही नहीं और आज 'महाराज! बताओ तो सही, बात क्या है? हमें तो देनेके लिये कह दिया तो बात क्या है? उसने उनसे पूछा आप उपदेश देते हैं कि शोक नहीं करना चाहिये, कि 'महाराज! आप बताओ कि आपने पण्डितजीका चिन्ता नहीं करनी चाहिये, फिर मित्रोंका नाश होनेसे

साधकोंके प्रति—

क्या उपकार किया है ? पण्डितजीके साथ आपका क्या सम्बन्ध है ? आज हमने पण्डितजीके स्वभावसे विरुद्ध

बात देखी है। बहुत वर्षोंसे देखता हूँ कि पण्डितजी

किसीको ऐसा नहीं कहते कि तुम इसे दे दो, पर आपके

लिये ऐसा कहा, तो बात क्या है?' वे चारों आपसमें

एक-दूसरेको देखने लगे, फिर बोले कि 'ये एक दिन

मौतके मुँहमें जा रहे थे तो हमने इन्हें मौतसे बचाया था।

इससे इनके हाथ ही कटे, नहीं तो गला कट जाता! उस

उपकारका ये बदला चुका रहे हैं।'

संख्या १२]

उनकी इतनी बात पृथ्वी सह नहीं सकी। पृथ्वी फट गयी और वे चारों व्यक्ति पृथ्वीमें समा गये! सिपाहियोंको

बड़ी किठनाई हो गयी कि अब धन कहाँ ले जायँ! वे तो पृथ्वीमें समा गये! अब वे वहाँसे लौट पड़े और आकर सब बातें बतायीं। उनकी बात सुनकर पण्डितजी

आकर सब बातें बतायीं। उनकी बात सुनकर पण्डितजी जोर-जोरसे रोने लगे। रोते-रोते आँसू पोंछने लगे तो उनके हाथ पूरे हो गये। यह देखकर राजाको बडा आश्चर्य हुआ कि

यह क्या तमाशा है! हाथ कैसे आ गये! राजाने

सोचा कि वे इनके कोई घनिष्ठ मित्र थे, इसलिये

लोग मुझे संत कहते हैं, अच्छा पुरुष कहते हैं, पण्डित कहते हैं, धर्मात्मा कहते हैं, किंतु मेरे कारण उन बेचारोंके प्राण चले गये! अत: मैंने भगवान्से रोकर प्रार्थना की कि हे नाथ! मुझे लोग अच्छा आदमी

कहते हैं तो बड़ी भूल करते हैं! मेरे कारण आज चार आदमी मर गये तो मैं अच्छा कैसे हुआ? मैं बड़ा दुष्ट हूँ। हे नाथ! मेरा अपराध क्षमा करो। अब मैं क्या कर

राजाको बड़ा आश्चर्य हुआ और बोला—'महाराज!

आप अपनेको अपराधी मानते हैं कि चार आदमी मेरे

कारण मर गये, तो फिर आपके हाथ कैसे आ गये?'

वे बोले कि 'भगवान् अपने जनके अपराधोंको, पापोंको,

अवगुणोंको देखते ही नहीं! उन्होंने कृपा की तो हाथ

आ गये।' राजाने कहा—'महाराज! उन्होंने आपको

इतना दु:ख दिया तो आपने उन्हें धन क्यों दिलवाया?'

वे बोले—'देखो राजन्! उन्हें धनका लोभ था और लोभ

होनेसे वे और किसीके हाथ काटेंगे; अत: विचार किया

सकता हैं।'

आप क्यों रोते हैं? शोक क्यों करते हैं?' तब वे बोले

कि 'ये जो चार आदमी थे, इन्होंने ही मुझसे धन

हाथ काटनेवालोंको आपने मित्र कैसे कहा?' जयदेव

बोले—'राजन्! देखो, एक जबानसे उपदेश देता है और

एक क्रियासे उपदेश देता है। क्रियासे उपदेश देनेवाला

ऊँचा होता है। मैंने जिन हाथोंसे आपसे धन लिया, रत्न

लिये, वे हाथ काट देने चाहिये। यह काम उन्होंने कर दिया और धन भी ले गये। अत: उन्होंने मेरा उपकार

किया, मुझपर कृपा की, जिससे मेरा पाप कट गया। इसलिये वे मेरे मित्र हुए। रोया मैं इस बातके लिये कि

राजाको बड़ा आश्चर्य हुआ और बोला—'महाराज,

छीन लिया और हाथ काट दिया था।'

भाग ८९ कि आप धन देना ही चाहते हैं तो उन्हें इतना धन दे है, मेरी निन्दा करता है, मुझे कष्ट पहुँचाता है, मेरी हानि दिया जाय कि जिससे बेचारोंको कभी किसी निर्दोषकी करता है-ऐसा जो विचार आता है, यह कुबुद्धि है, हत्या न करनी पड़े। मैं तो सदोष था, इसलिये मुझे दु:ख नीची बुद्धि है। वास्तवमें दोष उसका नहीं है, दोष है दे दिया; परंतु वे किसी निर्दोषको दु:ख न दे दें, इसलिये हमारे पापोंका, हमारे कर्मींका। इसलिये परमात्माके मैंने उन्हें भरपेट धन दिलवा दिया।' राजाको बडा राज्यमें कोई हमें दु:ख दे ही नहीं सकता। हमें जो दु:ख आश्चर्य हुआ! उसने कहा कि 'आपने मुझे पहले क्यों मिलता है, वह हमारे पापोंका ही फल है। पापका फल भोगनेसे पाप कट जायगा और हम शुद्ध हो जायँगे। नहीं बताया ?' वे बोले कि 'महाराज! यदि पहले बताता तो आप उन्हें दण्ड देते। मैं उन्हें दण्ड नहीं दिलाना अत: कोई हमारी हानि करता है, अपमान करता है, चाहता था। मैं तो उनकी सहायता करना चाहता था; निन्दा करता है, तिरस्कार करता है, वह हमारे पापोंका क्योंकि उन्होंने मेरे पापोंका नाश किया, मुझे क्रियात्मक नाश कर रहा है—ऐसा समझकर उसका उपकार मानना उपदेश दिया। मैंने तो अपने पापोंका फल भोगा, इसलिये चाहिये, प्रसन्न होना चाहिये। किसीके द्वारा हमें दु:ख हुआ तो वह हमारे मेरे हाथ कट गये। नहीं तो भगवानुके दरबारमें, भगवानुके रहते हुए कोई किसीको अनुचित दण्ड दे प्रारब्धका फल है, परंतु यदि हम उस आदमीको सकता है ? कोई नहीं दे सकता। यह तो उनका उपकार खराब समझेंगे, अन्य समझेंगे, उसकी निन्दा करेंगे, है कि मेरे पापोंका फल भुगताकर मुझे शुद्ध कर तिरस्कार करेंगे, दु:ख देंगे, दु:ख देनेकी भावना करेंगे तो अपना अन्त:करण मैला हो जायगा, हमारी हानि दिया।' इस कथासे सिद्ध होता है कि सुख या दु:खको हो जायगी! इसलिये सन्तोंका यह स्वभाव होता है देनेवाला कोई दूसरा नहीं है; कोई दूसरा सुख-दु:ख देता कि दूसरा उनकी बुराई करता है, तो भी वे उसकी है—यह समझना कुबुद्धि है—'सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि भलाई करते हैं-दाता परो ददातीति कुबुद्धिरेषा।' (अध्यात्मरामायण उमा संत कइ इहइ बड़ाई। मंद करत जो करइ भलाई॥ २।६।६) दु:ख तो हमारे प्रारब्धसे मिलता है, पर उसमें (रा०च०मा० ५।४१।७) ऐसा सन्त-स्वभाव हमें बनाना चाहिये। अत: कोई कोई निमित्त बन जाता है तो उसपर दया करनी चाहिये कि बेचारा व्यर्थमें ही पापका भागी बन गया! रामायणमें दु:ख देता है तो उसके प्रति सद्भावना रखो, उसे सुख कैसे मिले—यह भाव रखो। उसमें दुर्भावना करके आता है कि वनवासके लिये जाते समय रात्रिमें श्रीरामजी निषादराज गुहके यहाँ ठहरे। निषादराजने कहा— मनको मैला कर लेना मनुष्यता नहीं है। इसलिये तनसे, मनसे, वचनसे सबका हित करो, किसीको दुःख न दो। कैकयनंदिनि मंदमति कठिन कृटिलपन् कीन्ह। जो तन-मन-वचनसे किसीको दु:ख नहीं देता, वह जेहिं रघुनंदन जानिकहि सुख अवसर दुखु दीन्ह॥ इतना शुद्ध हो जाता है कि उसका दर्शन करनेसे पाप (रा०च०मा० २।९१) तब लक्ष्मणजीने कहा— नष्ट हो जाते हैं-काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत करम भोग सबु भ्राता॥ तन कर मन कर वचन कर, देत न काहू दु:ख। तुलसी पातक हरत है, देखत उसको मुक्ख॥ (रा०च०मा० २।९२।४) Hinduisक Discord Server https://dsc.gg/dharma नारायण b नारायण । Love By Avinash/Sha

भगवत्कथासे प्रेतोद्धार संख्या १२] भगवत्कथासे प्रेतोद्धार (श्रीरामकेदारजी शर्मा) अनेक प्रकारकी विचित्रताओंसे भरा हुआ यह कभी जबरन बैठाया भी तो वह सो जाती या वहाँसे भाग विशाल विश्व उस लीलामय प्रभुका एक इन्द्रजाल ही जाया करती, परंतु आज ऐसी बात नहीं थी। आज वह है। दिन-रात आँखोंके सामने होनेवाली उनकी अद्भुत सावधानीसे पालथी लगा कथा सुन रही थी। मैंने सशंक लीलाओंको देखते हुए भी हमारी आँखें नहीं खुलतीं, उस हो बीचमें ही बच्चीसे (क्योंकि एक बार दो-तीन मास प्रभुकी सत्ता एवं उसके सनातन विधानोंपर आस्था नहीं पूर्व रात्रिमें सुप्तावस्थामें ही वह अनायास रोने-चिल्लाने लगी थी, तो घरवालोंने किसी झाड़-फूँकवालेको बुलाकर होती, विश्वास नहीं होता। फलत:, हम स्वेच्छाचारितावश दिखाया था) पूछा—'तुम कौन हो? कहाँ रहती हो? नीतिपथसे विमुख हो अपना जीवन जन्म-जन्मान्तरके कहाँसे, किसलिये आयी हो?' तो उसने उत्तर दिया— लिये घोर संकटमें डाल लेते हैं। प्रभुकी विचित्र लीलाओंका प्रत्यक्ष अनुभवकर नीचे कुछ पंक्तियाँ पाठकों, 'मैं यहीं पासमें ही रहती हूँ, बहुत दूरसे अभी आयी हूँ, विशेषकर उन महानुभावोंको ध्यानाकर्षित करनेके लिये एक जगह कथा सुनने गयी थी, वहाँ अच्छी कथा नहीं उपस्थित की जाती हैं, जिन्हें प्रभु अथवा उनकी हो रही थी। अत: यहाँ सुनने चली आयी।' 'फिर कभी लीलाओंपर कतई विश्वास नहीं होता। आयेगी?' मेरे प्रश्न करनेपर उसने उत्तर दिया—'एक दिन और आऊँगी।' मैंने कहा—'जब भागवतकी कथा घटना लगभग पचपन वर्ष पहलेकी है। मेरे परिवारका नियम था कि प्रतिदिन सन्ध्या-समय बच्चे-होगी, तब आना।' फिर मैं कथा कहने लगा और समाप्त बूढ़े एक साथ बैठकर प्रार्थना करते थे। बादमें रामायण, होनेपर मैंने कहा—'अब कथा समाप्त हो गयी।' तो, 'अब जाऊँगी' वह बोली। मैंने कहा—'जाओ।' बच्ची भागवत आदि किसी-न-किसी ग्रन्थकी कथा भी प्राय: होती थी, जिसे मेरे पुज्य वृद्ध पिताजी तथा कुछ अन्य फुर्तीसे उठकर चल पड़ी। मैंने दो लड़कोंको पीछेसे देखनेको भेजा कि 'वह कहाँ जाती है?' बच्ची राहपर श्रद्धालु नर-नारी भी सुना करते थे। एक दिन प्रार्थना समाप्त होते ही मेरी ग्यारह सालकी बच्ची जोरोंसे रोने कुछ दूर जा, फिर लौट आयी। मैंने उसके आते ही पूछा—'बच्ची, कहाँ थी?' 'घरपर सोयी तो थी!'— लगी। हमलोगोंके बहुत समझानेपर भी चुप नहीं होती उसने कहा! अब वह प्रकृतिस्थ थी। धीरे-धीरे ये बातें थी। मैंने रंजमें उसे बहुत डाँटा। फिर तो वह बिलकुल चुप हो गयी और पूछनेपर कि 'क्यों रो रही थी?' उसने सबोंको भूल गयीं। कहा—'कहाँ रोती थी?' फिर उसे रामायण पढ़नेका X दो महीने बाद ज्येष्ठका पुरुषोत्तममास आया। आदेश देकर (क्योंकि उसे नित्य रामायण ही पढ़ायी जाती थी) मैं कुछ स्वाध्यायमें लग गया। रामायण महीनेभरके लिये शामको भागवतकी कथाका आयोजन पढ़नेके सिलसिलेमें ही कुछ देर बाद वह आकर मेरे किया। दो-तीन ही दिन कथारम्भके हुए थे कि प्रार्थनाके पूज्य पिताजीसे रोती बाहर रास्तेकी ओर इशाराकर कहने बाद बच्चीको एकाएक मुर्च्छा आ गयी। होश आनेपर पूछनेसे पता चला कि वही 'प्रेतात्मा' वादेके मुताबिक लगी—'बाबा, देखिये, वह वहाँपर खड़ी औरत मुझे पढ़नेसे मना करती है, उसे मारिये न!' मैं यह सुनकर भागवतकी कथा सुनने आयी है। महीनेभर कथा चलेगी, तुरंत वहाँ गया। देखा, रास्तेपर कोई औरत कहीं न थी। यह जानकर नियमितरूपसे वह बच्चीके माध्यमसे आश्चर्य हुआ। फिर उसे ले जाकर कमरेमें बैठाया, जहाँ (मुर्च्छा लगाकर) आने भी लगी। दो ही दिनों बाद यह पुज्य पिताजीको श्रीरामचरितमानसकी कथा सुना रहा आश्चर्यजनक खबर घर-घरमें फैल गयी। प्रार्थना था। यों तो बच्चीको कथा सुननेका शौक नहीं। अगर समाप्त हुई कि बच्ची बेहोश! फिर क्षणभरमें होश

भाग ८९ दुरुस्त! और बच्ची शान्त हो कथा सुननेके लिये बैठ तथा— जाती। यह तमाशा देखनेके लिये सायंकाल मेरे दरवाजेपर विन्ध्यक्षेत्रस्य मातृभ्योऽथवा भक्त्या समर्पय। भीड़ लग जाती थी, जो मुझे अखरने लगी। कथा-जीवितानां व्यसूनां वा विश्वनाथः परा गतिः॥ अन्ततोगत्वा मैंने अपने मनमें निश्चय कर लिया कि समाप्तिके बाद दिनोंदिन कुछ समयतक मेरी उसके साथ बातें हुआ करतीं; जिसमें उसका नाम-पता, उसे किस नवरात्रके अवसरपर इन्हें ले जाकर काशी विश्वनाथकी शरणमें सौंप दूँगा। पूछनेपर उनकी सहर्ष स्वीकृति भी प्रकार यह योनि मिली, रहन-सहन, उसके संगी-साथी, कथा-श्रवणको लगन आदि बातोंको जानकारी मिली। मिल गयी। संयोगवश मुझे जरूरी कार्यवश पटनाकी ओर मैंने तो तब दाँतों अँगुली काटी, जब उसके द्वारा यह जाना पड़ा, वहाँ चार-पाँच दिन ठहरा। गंगा-स्नान नित्य मालूम हुआ कि मेरा सद्य:प्रसूत शिशु और उसकी माँ, करता था। मैंने सोचा, शास्त्रोंमें श्राद्ध-तर्पणादिके करनेसे जो सात वर्ष पहले ही एक साथ चल बसे थे तथा मेरा प्रेत-पितरोंकी तृप्ति होनेकी बात लिखी है। इन प्रेतात्माओंके ज्येष्ठ पुत्र जो बीस वर्षकी कच्ची उम्रमें ही अपनी कथानानुसार इन्हें खाने-पीने आदि बातोंमें कष्ट उठाने नवविवाहिता पत्नीको छोड़ गत वर्ष आश्विनमें अकस्मात् पड़ते हैं, अत: क्यों न इनके नामसे दो-चार जलांजलि सर्पदंशसे चल बसा था-सब-के-सब साथ-साथ रहते दे दूँ ? अत: ३-४ दिनोंतक नित्य उनके नामसे मैंने गंगामें थे। धीरे-धीरे वे सब भी कथामें सम्मिलित होने लगे। तर्पण किया। बादमें घर लौटनेपर उन लोगोंसे अलग-विशेषता यह थी कि उन लोगोंकी सम्मतिसे ही कथाके अलग जिज्ञासा करनेपर पता चला कि इन चार दिनोंमें अतिरिक्त समयमें स्मरणमात्रसे ही उनके आनेपर बच्चीके उन्हें कोई कष्ट नहीं हुआ, बल्कि किसी अज्ञात शक्तिके माध्यमसे घण्टों अलग-अलग सबोंसे बातें हुआ करती द्वारा एक सुवर्णकी थालीमें नित्य भोजनके लिये मेवे-मिष्ठान्न उन्हें मिलते थे और खा-पी लेनेके बाद थाली थीं और जीवित लोगोंकी तरह क्रमश: उनसे मेरी आत्मीयता बढ़ने लगी। लोगोंका हंगामा और बच्चीके जहाँ-की-तहाँ चली जाती थी। इस तरह प्रेतात्माओंसे शारीरिक कष्टको देख मैंने उन (मृतात्माओं)-से यह प्रत्यक्ष सुन और अनुभवकर पारलौकिक विषयोंके सम्बन्धमें अभिलाषा प्रकट की कि कथा सुननेका वे कोई दूसरा शास्त्रीय वचनोंकी सत्यता अक्षरश: प्रमाणित हुई और उनके उपाय सोचें, जिससे बच्चीको किसी प्रकारका कष्ट न प्रति मेरी आस्था और भी अधिकाधिक दृढ़ हो गयी। हो और जन-साधारणकी भी भीड़ न लगे। इसपर उनके एक दिन बातचीतके सिलसिलेमें उनमेंसे एकने इच्छानुसार अलग एक आसनका प्रबन्ध रोज किया जाने प्रसन्नतापूर्वक कहा—'भाईजी! आज देवदूतने कहा है लगा, जहाँ वे अब बच्चीको बिना मूर्च्छित किये ही कि 'तुमलोगोंकी यहाँ रहनेकी अवधि पूरी हो रही है। आकर कथा सुनने लगीं। हाँ, बच्ची उन्हें साक्षात् देखा अब दो-चार दिन और कथा-पुराण सुन लो, फिर यहाँसे करती और बातें भी कर लेती थी। चल देना है। कुछ एकको तो भादोंके अन्ततक जन्म इस प्रकार लगभग डेढ़ माहतक कथा चलती रही ले लेना है और कुछ दो वर्ष बाद इस योनिसे मुक्त होंगे; और उन प्रेतात्माओंका नियमितरूपसे कथा-श्रवण भी किंतु यहाँ किसीको रहना न होगा।' यह सुनकर शीघ्र चलता रहा। कभी-कभी बच्चीके माध्यमसे वे बहुत रोने हमने योजना बना उन्हें 'श्रीमद्भागवत-सप्ताह' सुनाना लगतीं और प्रेतयोनिसे अपने उद्धारके लिये प्रार्थना आरम्भ किया। इस अवसरपर कितनी ही नयी बातें करतीं। मेरे आश्वासन देनेपर चुप हो जातीं। इस प्रसंगमें देखनेको मिलीं। जैसे अबतक कथामें न सम्मिलित काशीके एक सुप्रसिद्ध महात्मासे पत्रद्वारा इनके उद्धारका होनेवाले मेरे विंशतिवर्षीय दिवंगत पुत्रका आना तथा मुझसे एवं पिताजीसे मिलकर बच्चीके माध्यमसे बातें उपाय पूछा तो उत्तर मिला— करना, प्राण-त्यागका कारण बताना, जीवनकालकी देहि पिण्डं गयां गत्वा विशालामथवा पुनः।

संख्या १२] भगवत्कथा	से प्रेतोद्धार २१

अन्य आवश्यक बातें, अन्य व्यक्तियोंद्वारा जाँचमें पूछे	दर्शनार्थ एक दिन सीतामढ़ी जाना पड़ा। वे भी गयीं और
गये प्रश्नोंके उत्तर देकर उनके सन्देहको दूरकर उन्हें	वहाँ भी क्रमशः उनका परिचय पाकर तीर्थविधिसे
आश्चर्यमें डाल देना। किसी अन्य प्रेतात्माद्वारा कथाभूमिको	दर्शनादिकर शामको घर वापस आया। उसी दिन उन
मिनटोंमें लीपपोत देना एवं अपनी एक खास विचित्र	आत्माओंको यहाँसे कुछ दिनोंके लिये उत्तर दिशामें
भाषाद्वारा बातें करना तथा बिना बुलाये ही घरकी	ऊपरकी ओर जाना था। रातके नौ बजते ही वे बारी-
औरतोंसे बातें करना आदि। सबसे बढ़कर मार्केकी बात	बारीसे मेरे पास बच्चीके माध्यमसे आ–आकर पैर छू
यह हुई कि इस बीच मेरा सद्य:प्रसूत मृत शिशु, जिसका	प्रणामकर चलने लगीं। मैंने पूछा—'अभी इतना पहले
सातवाँ वर्ष था, अब बच्चीके माध्यमसे आने लगा और	ही क्यों जा रही हैं?' उन्होंने कहा—११ बजेतक चले
विभिन्न प्रकारकी अद्भुत बाललीलाएँ करता हुआ प्राय:	जाना है और देवदूत रथ लेकर खड़े हैं, जल्दी चलनेको
सदा ही घरमें रहने लगा। प्राय: डेढ़ महीने यह क्रम	कह रहे हैं।' फिर वे घरके अन्य व्यक्तियोंसे मिलकर
चला। अब बच्चीका अपना व्यवहार खाने-पीने, रहने-	चले गये। 'बच्चा बाबू' से पता चला कि जाते समय
सोने, नहाने-पहनने आदिका ढंग ही बदल गया।	वे आत्माएँ हमसे बिछुड़कर बहुत रो रही थीं। इधर मेरा
बिलकुल मासूम बच्चेकी तरह उसका व्यवहार सबोंके	भी हृदय करुणासे भर आया। आँखसे आँसू गिर पड़े।
साथ होता। मैं भी उसे 'बच्चा बाबू' कहकर पुकारता,	इस अवसरपर मेरा 'बच्चा बाबू' स्व० ज्येष्ठ पुत्र और
लाड़-प्यार करता, गोद लेता, जो मेरे लिये एक नवीनता	उसके साथी अपनी प्रेतयोनिकी पत्नीके साथ नहीं गये।
थी। मुझमें विचित्र ममत्व आ गया। भागवती कथा	कारण, एक तो ज्येष्ठ पुत्र बीमार था, दूसरे उसकी पत्नीके
ब्रह्माके मोहभंग-प्रसंगमें कृष्णमय अपने बच्चोंके प्रति	प्रसव भी हुआ था, जिसमें जन्मोत्सव मनाने मेरी पत्नी
गोप-गोपियोंकी उत्तरोत्तर बढ़ती प्रीति एवं गुरु सान्दीपनि	भी आयी थी। 'बच्चा बाबू 'से तो प्रतिदिनकी बातें मालूम
तथा माता देवकीकी मृत पुत्रोंको पाकर बढ़ते हुए प्रेमकी	होती ही थीं, पत्नीसे भी वस्तुस्थितिका यथावत् परिचय
कथा चरितार्थ होनेकी याद हो आयी।	मिला। अपने स्वर्गीय ज्येष्ठ पुत्रकी पत्नी और प्रसवकी
'बच्चा बाबू' से बहुत-सी अद्भुत बातें मालूम हुईं।	बात सुन आश्चर्यान्वित होकर अपनी पत्नीसे मालूम हुआ
१०-२० वर्ष पूर्व मृत कितने ही लोगोंकी प्रेत-योनिमें	कि दो वर्षोंतक उसे (स्व० पुत्रको) अकेले रहनेमें कष्ट
अबतक रहनेकी बात एवं उनके जीवन-कालके रहन-	होगा, अत: आग्रहपूर्वक मैंने ही विवाह करवा दिया है।
सहन, स्वभाव, आचरणका हूबहू प्रतिरूप बताना।	फिर प्रेतयोनिमें सद्य: गर्भ रहता है और एक मासके अन्दर
भागवत–महाभारतको कितनी ही रहस्यमयी कथाएँ	ही प्रसव भी। प्रेतशरीरकी आकृतिके विषयमें पूछनेपर पता
सुनाना। श्रीकृष्णके बाँसुरीवादनकी भाव-भंगिमा तोतली	चला कि पृष्ठभाग खाली और मुँहका छिद्र सूईके छिद्र-
बोलीमें गाते हुए प्रस्तुत करना और बाँसुरीकी ताल-	इतना होता। ईश्वरीय नियमसे बद्ध होनेके कारण चारों
मात्राके साथ गाना संगीत मास्टरकी तरह होता था, जिससे	ओर अन्न-जलकी प्रचुरता होनेपर भी इच्छानुसार नहीं
मेरी बच्ची तो सर्वथा अनिभज्ञ ही थी। इसके अतिरिक्त	मिल पाता। गन्दे स्थानोंका जल तथा मारे-मारे फिरनेपर
इस संक्रमण-कालमें बच्चीकी सारी चेष्टाएँ लड़के-सी	गन्दे स्थानों या दूकानोंमें फैले अन्नोंका रस मिल जाता
होतीं। दौड़ना, खेलना, कूदना, उन्हीं-सा पोशाक पहनना	है, जो पर्याप्त नहीं होता। किंतु जबसे भागवती कथाका
और बाहर दूर-दूर किसीके साथ जाना इत्यादि।	इन्हें सुअवसर मिला, तबसे सारी असुविधाएँ दूर होती
बच्चा बाबूकी यह करामात तो श्रावणतक चली।	गयीं। मुझे भी उनकी उत्तरोत्तर बढ़ती हुई प्रसन्नताका
किंतु सप्ताहकथा समाप्त होनेपर उन प्रेतात्माओंके	अनुभव होता रहा। उन्हीं लोगोंसे यह भी विदित हुआ
आग्रहसे मुझे परिवारके साथ जगज्जननी जानकीके	कि ठीक इहलोककी तरह गाँवके २०-२५ हाथ ऊपर

भाग ८९ ****************************** अन्तरिक्षमें प्रेतलोक भी है। उनके भी गाँव-नगर बसे हैं। हुई। मुझे तो उस अवसरपर बराबर गोकर्ण और उनमें भी नौकर-चाकर, वैद्य-डॉक्टर, मूर्ख-पण्डित, धुन्धकारीकी स्मृति आती रहती थी। आश्चर्य यह होता साध-वैरागी आदि सभी हैं, जैसा कि मनुष्यलोकमें होता है कि वायवीय शरीर होनेके नाते धुन्धकारी बाहर न बैठ है; क्योंकि कारणविशेषसे ही तो प्रेतयोनिमें जाते हैं और सकनेके कारण बाँसके छिद्रमें बैठता था, पर यहाँ ये यह भी अनुभव किया कि अकाल-मृत्युसे या सर्पदंश, लोग बाहर ही बैठा करते थे। इतना जरूर था कि अग्निदाह, वृक्षपातादिसे मरनेपर ही लोग प्रेत होते हैं— देवयोनि होनेके कारण जमीनसे इनका स्पर्श न होता था। ऐसी भी बात नहीं। बल्कि समयपर बिना किसी विघ्न-नियमितरूपसे कथा सुननेवाले प्रेतात्माओंके नाम ये बाधाके मरने या विधिवत् अन्त्येष्टि क्रिया करनेपर भी हैं—मेरी पत्नी (रामकुमारी), मेरे पुत्रद्वय (विनयकुमार, लोग प्रेतयोनिमें निश्चित अवधितक वास करते हैं। अपने-विजयकुमार), रामइकबाल (विनयका साथी जिन दोनोंका अपने कर्मानुसार वहाँ भी सुख-दु:खसे जीवन जीते हैं। एक-डेढ् माहके अन्दरसे अभिचार-प्रयोगात्मक सर्पदंशसे जीवनकालमें जो धर्मात्मा, आचारनिष्ठ, विद्वान् होते हैं, मृत्यु हुई), सिकली (रामइकबालकी बहन) और सिकलीकी माँ। प्रेतयोनिमें उनकी वैसी ही स्थिति होती है और भगवान्की ओरसे सुख-भोगकी, घर-महल, खान-पान आदिकी इन लोगोंके द्वारा जिन प्रेतात्माओंके परिचय मिले, सारी सुव्यवस्था यहाँकी अपेक्षा अधिक कर दी जाती उनके नाम ये हैं—मेरी माताजी (श्रीराजेश्वरी देवी मृत्यु है। जो यहाँ कर्महीन, पापात्मा, दुराचारी रहते हैं, वे वहाँ १९४५ ई०); पुज्य चाचाजी पं० श्रीसरयूप्रसाद शर्मा भी भूखे-प्यासे मारे-मारे फिरते हैं। गन्दे-सूने खण्डहरों, (मृ० १९४६), बा० जोधीसिंह (मृ० १९५२), जय झा पेड़की डालियोंपर निवास करते हैं। पशुयोनिके प्रेतोंकी (मृ० १९४८), जयमन्त्र झा 'धुक्कू' (मृ० १९४२), कैलाशनाथ शुक्ल चहोत्तर (रायबरेली) निवासी (मृ० स्थिति धरतीके नीचे या ऊपर ही हड्डीके रूपमें रहती है, जबतक उन्हें रहना है; क्योंकि उनका तो दाह-संस्कार १९४५), मोहनदादा बैगना निवासी, सुभद्रा (विनयकी होता नहीं। प्रेतात्माओंने अपनी-अपनी स्थिति एवं घर-सहचरी) और जानकी (रामइकबालकी सहचरी)। द्वार आदिके विषयमें भी पूरा विवरण दिया, जो यहाँ पूर्वोक्त प्रेतात्माओंके साथ ही इन लोगोंकी प्रेतयोनिकी विस्तार-भयसे नहीं दिया जा सकता। अवधि पूरी हो गयी, सब-के-सब यहाँसे चले गये। श्रावण (१९६१)-में मैं बीमार पडा। महीनों रोग-उल्लिखित बातोंके अतिरिक्त भी बहुत-सी बातें ऐसी हैं, शय्यापर पड़ा रहा। इस दरिमयान प्रेतात्माएँ बराबर जिनका यहाँ समावेश ठीक नहीं जँचता। वैज्ञानिक इसका आकर मेरी सेवा अपने निश्चित माध्यमसे कर जाया शोध करें। मुझे तो सबका सार इतना ही प्रतीत होता है कि करतीं। भाद्र कृष्ण अष्टमीसे शुक्ल चतुर्थीके भीतर मेरी शास्त्रीय वचन कितने अटल सत्य हैं, भगवत्कथा कितनी दिवंगता पत्नीका मुजफ्फरपुरके 'कोरलिहया' ग्राममें महिमामयी शक्तिशालिनी है, जिसके पानेको देवयोनिका कन्याके रूपमें तथा मेरी एक ग्रामीण बहनका सीतामढ़ीके प्राणी भी लालायित रहता है। अतः हम मानवदेहधारियोंको पास भवदेवपुरमें ब्राह्मणकुल तथा उसकी माताका कल्याणार्थ अप्रमत्त हो शास्त्रीय सदाचारोंका पालन करते शूद्रकुलमें कहीं जन्म हो गया। ऐसी सूचना उन्हीं हुए निरन्तर भगवत्कथामृतका पान करना चाहिये। लोगोंसे मिली। जाँच करनेपर कोरलहियाकी बात सत्य न साम्परायः प्रतिभाति निकली। भवदेवपुरकी जाँच न कर सका। प्रमाद्यन्तं वित्तमोहेन मूढम्। श्रीमद्भागवतकथाकी महिमा प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर अयं लोको नास्ति पर इति मानी हुई। इसीके कारण प्रेतात्माओंसे परिचय मिला, उनका पुनर्वशमापद्यते मे ॥ उम्मात्त ब्राह्मत विशेष्टिकारी डी हो अब्हर ता समुद्धों अभी इस सुकुरी विभाग | MADE WITH LOVE BY Avi तको इसि इसि

आपके समस्त कार्य भगवान कर देंगे संख्या १२] आपके समस्त कार्य भगवान् कर देंगे (श्रीभीकमचन्दजी प्रजापति) बालक एवं माँ-दो माहका बालक है। उसके जानेपर उस पुत्रपर माता प्रेम तो करती है, परंतु पिछली समस्त कार्य उसकी माँ करती है, जैसे—उसको स्नान बात नहीं रहती (अर्थात् मातृपरायण शिशुकी तरह उसको करवाना, कपड़े पहनाना, सुलाना, दूध पिलाना, गन्दगी बचानेकी चिन्ता नहीं करती; क्योंकि वह मातापर निर्भर न कर देनेपर सफाई करना, बीमार हो जानेपर दवा देना, होकर अपनी रक्षा आप करने लगता है।) ज्ञानी मेरे प्रौढ (सयाने) पुत्रके समान है और [तुम्हारे-जैसा] अपने बलका उसकी पूरी देखरेख एवं सुरक्षा करना आदि। माँकी शक्ति एवं बुद्धि सीमित है, इसलिये माँसे भूल हो सकती है। मान न करनेवाला सेवक मेरे शिशु पुत्रके समान है। मेरे भगवानुका आश्वासन—भगवानुकी शक्ति एवं सेवकको केवल मेरा ही बल रहता है और उसे (ज्ञानीको) भगवान्की बुद्धि असीम है, अनन्त है, अपार है। अपना बल होता है, पर काम-क्रोधरूपी शत्रु तो दोनोंके श्रीरामचरितमानस (३।४३।५)-में भगवान् श्रीराम लिये हैं। [भक्तके शत्रुओंको मारनेकी जिम्मेवारी मुझपर यह आश्वासन देते हैं कि मैं माँकी भाँति ही साधककी रहती है; क्योंकि वह मेरे परायण होकर मेरा ही बल रखवाली करता हूँ। उनकी वाणी है— मानता है; परंतु अपने बलको माननेवाले ज्ञानीके शत्रुओंका करउँ सदा तिन्ह कै रखवारी। जिमि बालक राखइ महतारी॥ नाश करनेकी जिम्मेवारी मुझपर नहीं है।]' इसका अर्थ है—मैं सदा उसकी वैसे ही रखवाली विश्लेषण—इस साधनाका विशद विवेचन इस करता हूँ, जैसे माता बालककी रक्षा करती है। प्रकार है— (१) दो साधक—साधक दो प्रकारके होते हैं— साधना—भगवान् आपकी रखवाली तभी करेंगे— जब आप एक विशेष प्रकारकी साधना करेंगे। उस भगवानुका बड़ा पुत्र और भगवानुका छोटा पुत्र। छोटे पुत्रका नाम है—सेवक और बड़े पुत्रका नाम है—ज्ञानी। साधनाका नाम है—केवल भगवान्का भरोसा करना या भगवान्पर निर्भर हो जाना या भगवान्का छोटा बेटा बन सेवकके समस्त कार्य भगवान् करते हैं। ज्ञानीको अपने जाना। श्रीरामचरितमानस (३।४३।४—९)-में भगवान् समस्त कार्य स्वयंको करने पडते हैं। श्रीरामने अपने श्रीमुखसे इस साधनाको बताया है-(२) कार्य—कार्य दो प्रकारके हैं—सांसारिक कार्य और पारमार्थिक कार्य। अपने शरीर, अपने घर, सुनु मुनि तोहि कहउँ सहरोसा। भजहिं जे मोहितजि सकल भरोसा।। अपने परिवार, नौकरी, व्यवसाय, समाज आदिके कार्योंको करउँ सदा तिन्ह कै रखवारी। जिमि बालक राखड़ महतारी॥ गह सिसु बच्छ अनल अहि धाई। तहँ राखइ जननी अरगाई॥ सांसारिक कार्य कहते हैं। दु:खनिवृत्ति, परमशान्ति, जीवनमुक्ति, भगवद्भक्ति, भगवान्के दर्शन, भगवान्की प्रौढ़ भएँ तेहि सुत पर माता। प्रीति करइ नहिं पाछिलि बाता।। मोरें प्रौढ़ तनय सम ग्यानी। बालक सुत सम दास अमानी॥ प्राप्तिसे सम्बन्धित कार्योंको पारमार्थिक कार्य कहते हैं। (३) स्वाधीनता—भगवान्ने आपको ज्ञानी एवं जनहि मोर बल निज बल ताही। दुहु कहँ काम क्रोध रिपु आही।। अर्थात् श्रीनारदजीने भगवान्से पूछा—जब आपकी सेवक बननेकी पूर्ण स्वाधीनता दी है। आप चाहें तो सेवक मायाने मुझे मोहित कर दिया, तब मैं विवाह करना चाहता बन जायँ, आप चाहें तो ज्ञानी बन जायँ। था। आपने मुझे विवाह क्यों नहीं करने दिया? तब भगवान्ने (४) कैसे बनें — ज्ञानी एवं सेवक बननेमें न समय उत्तर दिया—'हे मुनि! सुनो, मैं तुम्हें हर्षके साथ कहता हूँ लगता है, न श्रम। इसमें न अभ्यास है, न प्रयास। इसमें कि जो समस्त आशा-भरोसा छोड़कर केवल मुझको ही शरीर और इन्द्रियोंकी सहायतासे कुछ भी नहीं करना पड़ता

भजते हैं। मैं सदा उनकी वैसे ही रखवाली करता हूँ, जैसे माता बालककी रक्षा करती है। छोटा बच्चा जब दौडकर

हाथोंसे] अलग करके बचा लेती है। सयाना (बड़ा) हो

है। आप अभी-अभी एक पलमें ज्ञानी अथवा सेवक बन सकते हैं। कैसे ? इसका उत्तर है—केवल सोचनेमात्रसे। आग और साँपको पकडने जाता है तो वहाँ माँ उसे [अपने यदि आप मनमें सोचते हैं कि मेरे पास जो भी बल है—

शरीरका बल, इन्द्रियोंका बल, मन-बुद्धि-विवेकका बल,

[भाग ८९ योग्यता और पदका बल, धनका बल आदि, वह मेरा है ज्ञानी है न मूर्ख। श्रीरघुनाथजी जब जिसको जैसा करते और मैं इस बलसे अपने सांसारिक एवं पारमार्थिक कार्य हैं, वह उसी क्षण वैसा ही हो जाता है। करता हूँ तो आप 'ज्ञानी' बन गये। यदि आप सोचते हैं— शिवजी कहते हैं-हे उमा! स्वामी श्रीरामजी मेरे पास जो भी बल है, वह मेरे प्रभुका बल है; मेरे सभी सबको कठपुतलीकी तरह नचाते हैं। सांसारिक एवं पारमार्थिक कार्य प्रभु करते हैं तो आप काकभुश्णिडजी कहते हैं —हे पक्षियोंके राजा 'सेवक' बन गये। गरुड! नट (मदारी)-के बन्दरकी तरह श्रीरामजी सबको सृक्ष्म एवं मार्मिक बात—सेवक सोचता है—मेरा नचाते हैं, वेद ऐसा कहते हैं। किसी भी प्रकारका कोई भी बल नहीं है, किसी अन्य श्रीमद्भगवद्गीतामें भगवान्की वाणी है— व्यक्ति एवं प्राणीका भी कोई बल नहीं है, सब बल मेरे प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः। प्रभुका है; मैं कुछ भी नहीं करता हूँ, अन्य व्यक्ति एवं अहङ्कारविमृढात्मा कर्ताहमिति प्राणी भी कुछ नहीं करते हैं, सबको सब कुछ भगवान् इसका अर्थ है-वास्तवमें सम्पूर्ण कर्म सब प्रकारसे करवाते हैं या भगवानुकी माया करवाती है। वह न तो प्रकृतिके गुणोंद्वारा किये जाते हैं तो भी जिसका अपनेको किसी कर्मका 'कर्ता' मानता है, न किसी अन्य अन्त:करण अहंकारसे मोहित हो रहा है, ऐसा अज्ञानी व्यक्ति एवं प्राणीको। वह तो एकमात्र भगवान् या उनकी 'मैं कर्ता हूँ' ऐसे मानता है। मायाको ही 'कर्ता' मानता है। वह सब कुछ करता हुआ भगवान्की मायाके सम्बन्धमें श्रीरामचरितमानसमें भी मनमें यही सोचता है—मैं कुछ नहीं करता हूँ, मैं 'अकर्ता' आया है-हूँ। इसलिये वह कर्मबन्धनमें नहीं फँसता है, उसको शुभ-लाग न उर उपदेसु जदिप कहेउ सिवँ बार बहु। अशुभ कर्मोंका फल नहीं मिलता है। उसका किसीमें भी बोले बिहसि महेसु हरिमाया बलु जानि जियँ॥ राग-द्वेष नहीं होता है। ज्ञानी सोचता है—मेरा बल है, मैं ही सब कुछ करता हूँ, मुझे इसका फल मिलेगा; दूसरोंके बहुरि राममायहि सिरु नावा। प्रेरि सतिहि जेहिं झूँठ कहावा।। पास भी बल है, वे ही सब कुछ करते हैं, उनको भी (१।५६।५) अपने-अपने कर्मोंका फल मिलेगा। इसका अर्थ इस प्रकार है—यद्यपि शिवजीने बहत बार समझाया, फिर भी सतीजीके हृदयमें उनका उपदेश (५) **वास्तविकता क्या है**—वास्तविकता, सच्चाई भी यही है कि इस संसारका कोई व्यक्ति, प्राणी, शरीरधारी नहीं बैठा, तब महादेवजी मनमें भगवानुकी मायाका बल कुछ भी नहीं करता है; उसमें किसी भी प्रकारका कोई जानकर मुसकराते हुए बोले। बल है ही नहीं; समस्त बल भगवानुका है, भगवानु ही फिर श्रीरामचन्द्रजीकी मायाको सिर नवाया, जिसने प्रेरणा करके सतीके मुँहसे भी झूठ कहला दिया। सबको सब कुछ करवाते हैं अथवा उनकी माया करवाती है। सभी व्यक्ति एवं प्राणी केवल कठपुतलियाँ हैं। विवेकके प्रकाशमें विचार करनेपर आपको स्पष्ट अनुभव होगा—'शरीर' अलग है, 'मैं' अलग हैं।'मैं' शरीर श्रीरामचरितमानसमें इस सच्चाईका स्पष्ट वर्णन आया है— नहीं हूँ। सब कुछ 'शरीर' करता है, 'मैं' कुछ भी नहीं करता बोले बिहसि महेस तब ग्यानी मूढ़ न कोइ। हूँ। शरीरको 'मैं' मान लेनेके कारण ऐसा मिथ्या आभास जेहि जस रघुपति करहिं जब सो तस तेहि छन होइ॥ होता है—'मैं करता हूँ।'यह भूल है।यदि आप इस भूलको (१।१२४क) मिटा लें तो आपको स्वत: अनुभव होगा—'में भगवानुका उमा दारु जोषित की नाईं। सबिह नचावत रामु गोसाईं॥ अंश हूँ। भगवान्के साथ ही मेरा नित्य सम्बन्ध है।' (४।११।७) नट मरकट इव सबिह नचावत। रामु खगेस बेद अस गावत॥ सच्चाईको स्वीकार करनेमात्रसे आपका कर्तापन मिट जायगा, आप सेवक बन जायेंगे। आपके समस्त कार्य अर्थात् तब महादेवजीने हँसकर कहा-न कोई भगवान् कर देंगे।

(१।५१)

'बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा' संख्या १२] 'बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा' (श्रीअमृतलालजी गुप्ता) शान्ति किसे नहीं चाहिये? सभी तो अशान्त हैं, और यही तो भक्ति है। जिसके व्यवहारमें दम्भ है, बेचैन हैं, व्याकुल हैं, दुखियारे हैं। किसीको इस बातका अभिमान है, कपट है, उसका व्यवहार शुद्ध नहीं। दु:ख है तो किसीको उस बातका दु:ख। आज एक जिसका व्यवहार शुद्ध नहीं, उसे भक्तिमें आनन्द आता बातका दु:ख है तो कल दूसरी बातका। संसारके सारे लोग दु:ख-संतप्त हैं। इन दु:खोंसे बाहर कैसे आयें? मानव भक्ति करता है, परंतु व्यवहार शुद्ध नहीं इन दु:खोंसे छुटकारा कैसे पायें? सही अर्थमें सुख-रखता। जिसका व्यवहार शुद्ध नहीं, वह मन्दिरमें भी शान्तिका जीवन कैसे जी सकें? भक्ति नहीं कर सकता। जिसका व्यवहार शुद्ध है, वह हमारे देशके ऋषियोंने, मुनियोंने इसी बातकी खोज जहाँ बैठा है, वहीं भक्ति करता है और वहीं उसका की कि दु:खोंसे छुटकारा कैसे मिले ? सही अर्थमें सुख-मन्दिर है। व्यवहार और भक्तिमें बहुत अन्तर नहीं है। शान्ति कैसे प्राप्त हो? सब एक ही परिणामपर पहुँचे अमुक समय व्यवहारका, अमुक समय भक्तिका-ऐसा विभाजन नहीं है। रास्ता चलते, गाड़ीमें यात्रा करते कि बिना हरिभजनके सुख-शान्ति नहीं मिल सकती। सबने अपने-अपने अनुभवके आधारपर मानवके क्लेश अथवा दुकानमें बैठकर धन्धा करते, सर्वकालमें और एवं तनावोंको मिटानेके उपाय बताये। भगवान् शिवजीने सर्वस्थलमें सतत भक्ति करनी है। भक्त बाजारमें शाक-उमा (पार्वती)-से कहा— भाजी लेने जाय, यह भी भक्ति है। उसका ऐसा भाव है कि—'मैं अपने ठाकुरजीके लिये शाक-भाजी लेने उमा कहउँ मैं अनुभव अपना। सत हरि भजनु जगत सब सपना।। उत्तरकाण्डमें काकभुशुण्डिजी भी अपना अनुभव जाता हैं।' प्रत्येक कार्यमें ईश्वरका अनुसन्धान, इसे कहते हैं पुष्टिभक्ति। बता रहे हैं— प्रभुका स्मरण करते-करते घरका काम करो तो निज अनुभव अब कहउँ खगेसा। बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा॥ वह भी भक्ति है। 'यह घर ठाकुरजीका है। घरमें कचरा (रा०च०मा० ७।८९।५) अतः क्लेशोंसे मुक्ति एवं सच्ची सुख-शान्ति रहेगा तो ठाकुरजी नाराज होंगे।' ऐसा मानकर झाड़ देना भी भक्ति है। मेरे प्रभु मेरे हृदयमें विराजमान हैं, उन्हें हरिभजनके अतिरिक्त किसी प्रकार नहीं मिल सकती भूख लगी है। ऐसी भावनासे किया हुआ भोजन भी लेकिन हरिभजन अर्थात् हरिभक्ति तभी सुख-शान्ति प्रदान करती है, जबिक उसे धारण किया जाय। भक्ति भक्ति है। बहुत-सी माताओंको ऐसा लगता है कि तो करें नहीं और उसकी चर्चा करें तो सुख-शान्ति नहीं कुटुम्ब बहुत बड़ा है, जिससे सारा दिन रसोईघरमें ही मिलती। अतः समझें कि भक्ति हमारे व्यवहारमें कैसे चला जाता है। सेवा-पूजा कुछ हो नहीं पाती, परंतु घरमें उतरे। सबको भगवद्रुप मानकर की हुई सेवा भी भक्ति है। भगवानुको चन्दन-पुष्प अर्पण करना, मात्र इतनेमें भक्ति करनेके लिये घर छोड़ने या व्यापार छोड़नेकी कोई भक्ति पूर्ण नहीं होती, यह तो भक्तिकी एक आवश्यकता नहीं। केवल अपने लिये ही कार्य करो, यह प्रक्रियामात्र है। भक्ति तो तब होती है जब सबमें पाप है। घरके मनुष्योंके लिये काम करो, यह व्यवहार भक्तिभाव जागता है। ईश्वर सबमें है। 'मैं जो कुछ भी है और परमात्माके लिये काम करो, यह भक्ति है। कार्य करता हूँ, उस सबको ईश्वर देखते हैं ' जो ऐसा अनुभव तो एक ही है, परंतु इसके पीछे भावनामें बहुत फर्क है। करता है, उसको कभी पाप नहीं लगता। उसका प्रत्येक महत्त्व क्रियाका नहीं, क्रियाके पीछे हेतु क्या है, भावना व्यवहार भक्तिमय बनता है। वह अतिशुद्ध व्यवहार है क्या है—यह महत्त्वपूर्ण है। मन्दिरमें एक मनुष्य बैठा-

बैठा माला फेरे परंतु विचार संसारका करे, दूसरा मनुष्य बुनकर थे, सेना भगत हजामतका काम करते थे। प्रभुका स्मरण करते-करते बुहारी करे तो उस माला ये सभी संत धन्धा करते थे, परंतु सबमें प्रभुको जपनेवालेसे यह बुहारी करनेवाला श्रेष्ठ है। देखते। ग्राहकमें भी परमात्माका अनुभव करते। प्रत्येक अपनी दिनचर्याकी सब क्रियाओंको भगवान्से महापुरुषको अपने धन्धेमेंसे ज्ञान मिला। प्राचीनकालमें जोड़ दें। हम स्नान कर रहे हैं। क्यों स्नान कर रहे हैं? महान् ज्ञानी ब्राह्मण भी वैश्यके घर सत्संगके लिये जाते। शरीरको स्वच्छ करनेके लिये; क्योंकि हमें भजन करनेके जाजिल ऋषिकी कथा है। एक दिन उनको आकाशवाणीसे लिये भगवान्के पास बैठना है। हमारे पसीनेकी दुर्गन्ध आज्ञा हुई कि सत्संग करना हो तो जनकपुरमें तुलाधार भगवानुको न आ जाय। इस भावनासे स्नान करना भी वैश्यके यहाँ जाओ। जाजिल ऋषि तुलाधारके यहाँ गये। भक्ति हो गया। हमें कोई रोग लग गया, उसका उपचार तुलाधार उस समय दुकानमें काम कर रहे थे। करा लें क्यों? क्योंकि हम निरोग हो जायँगे तो जाजलिको देखकर उन्होंने पूछा—क्या आकाशवाणी भगवानुका भजन अच्छे-से कर पायेंगे। इस भावनासे सुनकर आये हो? जाजलिको महान् आश्चर्य हुआ कि रोगका उपचार करना भी भक्ति बन गया। अतः अपने वैश्य और इतना महान्! तुलाधरसे पूछा कि तुम्हारा गुरु शरीरकी, मनकी सब क्रियाओंको भगवान्से जोड़ दें। कौन है? इस प्रकार हमारी दिनचर्याकी सब क्रियाएँ भक्तिमय हो तुलाधरने कहा—मेरा धन्धा ही मेरा गुरु है। मैं जायँगी। अपने तराजुकी डण्डी ठीक रखता हूँ। किसीको कम नहीं तोलता, बहुत नफा नहीं लेता। मेरी दुकानपर आनेवाला व्यवहार करो। व्यवहार करना खोटा नहीं, परंतु जो व्यवहार प्राप्त हुआ है, उसमें विवेककी आवश्यकता ग्राहक प्रभुका अंश है, ऐसा मानकर व्यवहार करता हूँ। है। मनुष्यको सतत भक्तिमें आनन्द नहीं आता। अपने-तराजूकी डण्डीकी तरह अपनी बुद्धिको ठीक रखता हूँ, जैसे साधारण मनुष्यका मन पाँच-छ: घण्टे परमात्माका टेढ़ी होने नहीं देता। अपने माता-पिताको परमात्माका ध्यान, सेवा-स्मरण करनेके उपरान्त कुछ और-और स्वरूप मानकर उनकी सेवा करता हूँ तथा धन्धा करता-माँगने लगता है। निरन्तर मिठाई मिले तो मनमें अभाव करता मनमें मालिकका सतत स्मरण रखता हूँ। होने लगता है, वैसे ही मनुष्यको सतत भक्ति करनेका धन्धा करनेमें ईश्वरको भूलो नहीं तो तुम्हारा धन्धा ही भक्ति बन जायगा। ठाकुरजीका दर्शन करनेमें यदि अवसर मिलनेपर वह भक्ति नहीं कर सकता। भगवान्मेंसे उसका मन हट जाता है। जैसे शरीरको थकान होती है, दुकान दीखे तो दुकानका काम-काज करनेमें भगवान् वैसे ही मनको थकान होती है। पाँच-छ: घण्टा सेवा क्यों न दीखें? कोई-कोई वैष्णव दुकानमें श्रीद्वारिका-करनेके उपरान्त मन थक जाता है। इसलिये दोनों नाथजीका चित्र पधराते हैं, यह ठीक है, परंतु द्वारिकानाथ प्रवृत्तियोंको ढूँढ़ता है। भक्तिके लिये प्रवृत्तियोंका निरन्तर सदा हाजिर हैं, ऐसा समझकर व्यवहार करें, यह बहुत

भाग ८९

भक्ति बनाओ। व्यवहारमें अपने धर्मको मत छोड़ो। जीवनमें धर्म ही बड़े-बड़े संत भी प्रारम्भमें धन्धा करते थे। संत मुख्य है अन्य चीजें गौण हैं। यह धन्धा करते-करते ही भक्ति करते थे और प्रभुको यदि हमारी दिनचर्याके व्यवहारमें भगवान्की भक्तिका प्राप्त करते थे। रंग एक बार भी चढ़ गया तो हमारे जीवनके क्लेश एवं HindUlshrevial

जरूरी है। जबतक देहका भान है, तबतक व्यवहार तो

करना ही पड़ेगा। व्यवहार करो परंतु व्यवहार करते-

करते परमात्मा सबमें विराजते हैं, यह भूलो मत।

त्याग करनेकी आवश्यकता नहीं है। प्रवृत्तियोंको सतत

भक्ति बनाओ। भक्ति दो-तीन घण्टेकी नहीं, चौबीसों

घण्टोंकी करो। अपनी प्रत्येक प्रवृत्तिको भक्तिमय बनाओ,

कैसे लायें जीवनमें खुशियाँ? संख्या १२] कैसे लायें जीवनमें खुशियाँ ? (डॉ० श्रीशैलजाजी आहूजा) आमतौरपर लोग नहीं जानते कि खुशी क्या है? जैसे जीवनमें क्या-क्या गलत है या उन्हें क्या-क्या अभीतक नहीं मिल पाया। इसके विपरीत वे लोग कम-ढेर सारे पैसे, ऐशो-आराम होते हुए भी आज लोग खुश नहीं हैं, जबिक जिनके पास ज्यादा कुछ नहीं होता, फिर से-कममें भी सुखी हैं, जिन्हें जो कुछ भी मिला है, वे भी वे ख़ुश रहते हैं। सच्चाई तो यह है कि ख़ुशी कहीं उसीसे सन्तुष्ट हैं। मनोवैज्ञानिकोंके अनुसार नकारात्मक नहीं, बल्कि हमारे अन्दर हर समय मौजूद रहती है, तत्त्व हमारे जीवनमें दु:ख, असंतोष एवं अशान्तिका संचार करते हैं जबिक सकारात्मक तत्त्व हमें आन्तरिक जिसे हम देख नहीं सकते, पर महसूस कर सकते हैं। वैज्ञानिकोंका दावा है कि उन्होंने ख़ुशीके उस खुशी, संतोष एवं शान्ति देते हैं। रहस्यको सुलझा लिया है, जो हमेशासे मनुष्यको परेशान खुशी बाजारमें मिलनेवाली कोई वस्तु नहीं है जिसे करता आ रहा था। यह रहस्य जटिल नहीं, बल्कि बहुत पैसे देकर खरीदा जा सके। इसका कोई आकार नहीं सरल है। लोग यह समझते हैं कि ख़ुशीका मतलब है— होता और न ही इसे चुराया जा सकता है। ख़ुशी छोटी सच्चा प्यार, ढेर सारी दौलत या फिर बढ़िया-सी नौकरी, या बड़ी नहीं होती और न ही यह बड़ी चीजोंको हासिल लेकिन वैज्ञानिकोंके अनुसार खुशीका एक फार्मूला करनेसे बनी रहती है। यह तो जिन्दगीकी छोटी-छोटी चीजोंसे मिलती रहती है। बस! हमें उन्हें देखने तथा (सूत्र) है-पीईएच। इसमें 'पी' का मतलब-पर्सनल कैरेक्टरस्टिक समझनेका तरीका नहीं आता। अर्थात् इंसानके व्यक्तिगत लक्षण, जिनमें शामिल है-'ए न्यू अर्थ' के लेखक एकहार्टका कहना है कि इंसानका जीवनके प्रति रवैया और विभिन्न परिस्थितियोंमें जिन्हें जीवनकी बड़ी ख़ुशी समझा जाता है, जैसे-नयी स्वयंको सन्तुलित रखनेकी क्षमता। 'ई' का मतलब है— कार खरीदना, अच्छी नौकरी हासिल करना, पगार बढ़ना एग्जिस्टेंस यानी अस्तित्व, जो हमारी सेहत, आर्थिक आदि। एक तो ये जीवनमें बहुत कम आती हैं और दूसरा स्थिति और हमारे मित्रों-सम्बन्धियोंसे जुड़ा हुआ है। इन्हें महत्त्व देकर हम स्वयंको भुला देते हैं और स्वयंसे दूर 'एच' का मतलब है—हायर आर्डर नीड्स अर्थात् हो जाते हैं; जबिक जीवनमें आनेवाली छोटी-छोटी खुशियाँ आत्मसम्मान, दूसरोंके लिये स्वयंकी आवश्यकताओंका ही जीवनका आधार होती हैं और जीवनमें रोजाना भारी उत्सर्ग करनेकी आकांक्षा इत्यादि। इस तरह तीन मात्रामें आती हैं, लेकिन हम अपने नकारात्मक दृष्टिकोणके कारण उन्हें देख नहीं पाते और न ही पर्याप्त महत्त्व देते हैं। अक्षरोंसे मिलकर बना यह खुशीका फार्मूला है, जिसे मनोवैज्ञानिकोंने शोधके उपरान्त तैयार किया है। सच तो यह है कि जीवनमें बडी उपलब्धि एवं बडी एक मनोवैज्ञानिक पीट कोहेनके अनुसार, 'ज्यादातर खुशी पानेके लिये हम इन ढेर सारी छोटी-छोटी खुशियोंकी लोग यह नहीं जानते कि खुशी क्या है? वे समझते हैं निरर्थक बलि देते रहते हैं और इस तरह न तो हम वर्तमानमें कि ख़ुशी मिलती है बहुत सारे पैसेसे, बड़ेसे घर या बढ़िया खुश रह पाते हैं और न ही भविष्यको सुखद कर पाते हैं। मकानसे, लेकिन वास्तवमें सच यह है कि कई लोग यह इसका कारण यह भी है कि निरन्तरके नकारात्मक चिन्तनसे और इस सोचसे कि जो हमें मिला है, वह कम है। हमारा सब कुछ होते हुए भी खुश नहीं हैं; चेहरेपर चमक नहीं है जबिक बहुत-से लोग इन सबके बिना भी बहुत खुश स्वभाव ही कुछ इस तरहका बन जाता है कि हम जाने-हैं और जिन्दगीका भरपूर सुख उठाते रहते हैं।' अनजाने मिलनेवाली इन खुशियोंकी परवाह ही नहीं करते कोहेनके अनुसार—वे लोग दुखी रहनेमें सबसे और सदा दुखी रहनेको अपना स्वभाव बना लेते हैं। आगे हैं जो नकारात्मक चीजोंपर अधिक ध्यान देते हैं ख़ुशी तो देनेकी चीज है, जिसे जितना बाँटो, वह

उतनी ही बढती है। यह जितना चाहो, उतनी मिल सकती है। बस, हमें केवल इसे देखने एवं समझनेका नजरिया बदलनेकी आवश्यकता है। प्रश्न यह उठता है कि इस दृष्टिकोणको कैसे बदला जाय ? कुछ ऐसे सरल एवं आसान उपाय हैं, जिन्हें अपनाकर हम न केवल अपने नकारात्मक दृष्टिकोणको बदल सकते हैं बल्कि स्वयंको सदा खुश भी रख सकते हैं। ऐसा ही एक उपाय है कि हम सदा स्वयंसे प्रेम करें। जब हम स्वयंको चाहते हैं, पसन्द करते हैं, तब ही दूसरोंसे प्रेम कर पानेमें और उन्हें आत्मीयता दे पानेमें समर्थ हो पाते हैं। जो स्वयंसे असन्तुष्ट होते हैं और सदा अपने व्यक्तित्वमें किमयाँ देखते रहते हैं, उनके आत्मविश्वासमें

सदा देखते हैं।

कमी बनी रहती है और वे दूसरोंका भी प्रोत्साहन नहीं कर पाते। उनकी अपनी असुरक्षा उन्हें दूसरोंको भी संरक्षण और सुरक्षा देनेमें नाकामयाब बना देती है। इस कमीको दुर करनेका एक अच्छा उपाय यह है कि हम नियमित अपनी डायरीमें कम-से-कम एक सत्य सकारात्मक घटना अपने विषयमें लिखें। ऐसा करनेके लिये हमें अपनी खामियोंको न देखकर अपनी खुबियोंपर ध्यान केन्द्रित करना होगा तथा सत्य लिखनेकी आदत हमें

ऐसा कर्म करनेके लिये प्रेरित भी करेगी। धीरे-धीरे सकारात्मक घटनाक्रमोंसे हमारी डायरी भी भरेगी और हमारे जीवनमें भी सद्गुणोंका समावेश होता चला जायगा। परमात्माने हर मनुष्यको कोई-न-कोई खास गुण दिया है जिसे हम पहचानें, खोजें और निखारनेका प्रयास करें। हर व्यक्ति अपने आपमें विलक्षण एवं खास है और परमात्माने उसके जैसा दुनियामें किसी दूसरेको नहीं बनाया है। इसलिये यदि हम यही दृष्टिकोण रखकर अपने व्यक्तित्वकी विशेषताओंपर ध्यान देते हुए उनको विकसित करनेका प्रयास करें तो शनै:-शनै: व्यक्तित्व ऐसी अनगितन विशेषताओंसे परिपूर्ण हो जाता है और हम अपनी एक विशेष पहचान बना पानेमें भी सफल हो जाते हैं। अपनी विशेषताओंपर ध्यान देनेका अर्थ दूसरेके व्यक्तित्वमें किमयाँ निकालना या दूसरोंसे अपनी तुलना करना नहीं हैं। इसका अर्थ मात्र अपने जीवनके प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण

अपनाना और उसे उसी अनुरूप विकसित करना है।

मनमें आत्मविश्वास पैदा करने एवं अपनी ख़ुशीको बढानेका एक अच्छा उपाय यह भी है कि हम विगत अतीतमें अपने द्वारा प्राप्त की गयी सफलताओंको याद करें। अतीतमें मिली कामयाबियों एवं जटिल संघर्षोंको याद करनेसे मनमें यह आत्मविश्वास स्वत: पैदा होता है कि हम भविष्यमें भी इस तरहके अच्छे कार्य कर सकते हैं। कुछ व्यक्तियोंके मनमें यह हीन भावना होती है कि

वे सुन्दर नहीं हैं। यह सच है कि सुन्दर बन जाना व्यक्तिके

हाथमें नहीं होता, लेकिन अपने अन्तर्मनको श्रेष्ठ बनाया

जा सकना अवश्य सम्भव है और इसके लिये हमें यथासम्भव

प्रयास करना चाहिये। नियमित स्वाध्याय, सत्संग, पीडितोंकी

सेवा, सुनी एवं पढ़ी गयी अच्छी बातोंपर चिन्तन, मनन

सकारात्मक दृष्टिकोण रखनेका उपाय यह भी है

कि जिन कार्योंको अतीतमें नहीं किया जा सका, उन्हें

हम वर्तमानमें करनेका प्रयास करें और इस तरह प्राप्त

उपलब्धियोंसे हमारे आत्मविश्वासमें जो बढोत्तरी होगी,

वह हमें भविष्यमें बड़े कार्योंको नृतन संकल्पके साथ

करनेका साहस भी प्रदान करेगी। बढा हुआ आत्मविश्वास

न केवल सन्तुष्टिका आधार बनेगा, बल्कि स्वत: ही हमें वह खुशी प्रदान करेगा, जिसे प्राप्त करनेका स्वप्न हम

भाग ८९

एवं उन्हें जीवनमें उतारनेके लिये किये गये प्रयत्न ही वे सब माध्यम हैं, जो मनुष्यको सुखी बनाते हैं। महापुरुषोंका कथन है—'**सुख बाँटें और दुःख बँटायें।'**यह जीवनकी खुशियोंको बढ़ानेका मूल मन्त्र है। हमारे सुख बाँटनेमें ही हमारी खुशी छिपी है और यदि हम इसे छिपाकर रखते हैं तो यह कभी विकसित नहीं हो पाती और दूसरोंके दु:खको बँटानेसे एक तो उनका दु:ख कम होता है और दूसरा इस परोपकारसे हमें वह आन्तरिक सन्तुष्टि मिलती है, जिसकी

सुगन्ध वायुमें फैलती है और सभीको आनन्दित करती है।

सकारात्मक सोचको अपनाना जरूरी है और इसे अपनानेके

लिये जरूरी है कि हम न केवल दिये गये उपायोंको अपनी

सोचमें सम्मिलित करें वरन् उनका निरन्तर प्रयोग भी करें,

तभी व्यक्तित्वमें स्थायी परिवर्तन ला पाना सम्भव होगा,

जो हमारे सुखको बढ़ानेमें सहायक सिद्ध होगा।

अपनी नकारात्मक सोचसे मुक्ति पानेके लिये

संख्या १२] गायोंकी चोरी रोकना आवश्यक गायोंकी चोरी रोकना आवश्यक (श्रीमुलखराजजी विरमानी) यह लेख नहीं, एक चेतावनी है कि गायकी घटती पाती। गाय पालनेवालोंको चाहिये कि गायको बाहर न आबादी भयंकर स्थितिमें पहुँच गयी है। अनुमान है कि बाँधकर घरके आँगनमें पूरी सुरक्षा देकर रखें। यहाँपर रातको हर दिन लगभग एक लाख देशी गायें कटती हैं। इस गश्त करती पुलिस कम सतर्क होनेके कारण गायोंको ट्रकोंमें अनर्थको बढ़ावा देनेके लिये बड़े वेगसे हर दिन कसाई नये लादकर ले जानेवाले चोर अपने काममें सफल रहते हैं। ट्रक खरीद रहे हैं, जिनमें रातको चोरीसे सड़कों और गायोंकी सुरक्षाके लिये गाँवों और छोटे शहरों जहाँसे गलियोंमें घूमती गायोंको बेहोशकर लादा जाता है। यह गायें उठ रही हैं, युवा लोग सुरक्षा दलके रूपमें रातको कसाई लोगोंके धन कमानेका सबसे आसान साधन बन दो-दो घण्टेकी अवधिके लिये पहरा दें। ऐसे दलोंको अपनी गया है। शायद ही ऐसा कोई छोटा शहर या गाँव हो, जहाँ सुरक्षाके लिये हथियार रखनेका लाइसेंस सरकार दे, तभी रातको ये ट्रक चक्कर लगा लगाकर गायको न उठाते हों। सुरक्षा सम्भव हो पायेगी। सुरक्षाके बारेमें अब ढील देनेकी स्वतन्त्रताके समय १२१ करोड गाय आज मात्र १० कोई गुंजाइश नहीं; क्योंकि गायोंकी घटती हुई आबादी ऐसे स्थानपर पहुँच गयी है, जो महान् चिन्ताका विषय है। करोड़ रह गयी हैं। समाज अब भी नहीं चेता और जानकी बाजी लगाकर गायकी चोरी तथा कटाईको नहीं रोका तो यह सिद्ध हो चुका है कि देशी गायका दूध अमृतके समान है और इसके सेवनसे कई रोगोंका निदान गाय बचनेवाली नहीं है। हमारी लगभग गाय-सम्बन्धी सभी संस्थाएँ बड़े परिश्रमसे सभाएँ तो बहुत करती हैं और हो जाता है। शहरमें रहनेवालोंको तो यह दूध नहीं

स्वतन्त्रताके समय १२१ करोड़ गाय आज मात्र १० करोड़ रह गयी हैं। समाज अब भी नहीं चेता और जानकी बाजी लगाकर गायकी चोरी तथा कटाईको नहीं रोका तो गाय बचनेवाली नहीं है। हमारी लगभग गाय-सम्बन्धी सभी संस्थाएँ बड़े परिश्रमसे सभाएँ तो बहुत करती हैं और उनमें गायकी रक्षाके निमित्त ईंट-से-ईंट बजा देनेकी धमिकयाँ भी देते हैं, कुछ प्रयास भी होते हैं, जिससे चोरी-छिपे कटनेके लिये ले जा रही कुछ गायोंको बचा भी लिया जाता है, परंतु अभीतक यह प्रयास अधूरे ही नहीं, बल्कि समस्याके हलके लिये नगण्य ही हैं। यह चेतावनी माँग करती है कि गायको बचानेके लिये हमें भाषणोंको लोड

कटनेके लिये ले जा रही कुछ गायोंको बचा भी लिया जाता है, परंतु अभीतक यह प्रयास अधूरे ही नहीं, बिल्क समस्याके हलके लिये नगण्य ही हैं। यह चेतावनी माँग करती है कि गायको बचानेके लिये हमें भाषणोंको छोड़ ठोस कदम उठानेकी आवश्यकता है। इस समय देशकी स्थिति यह है कि गलियों और बाजारोंमें रातको घूमती हुई गाय नितान्त असुरक्षित है। वास्तिवक स्थिति यह है कि गाय–चोरोंका मनोबल इतना बढ़ गया है कि गायें सुरक्षित स्थान जैसे गोशालाओंसे भी रातको उठायी जा रही हैं। ऐसी घटनाओंमें वृन्दावनके परिक्रमामार्ग-स्थित एक आश्रमकी गोशाला है, जिनके महन्त और बाकी संत गायकी चोरी और सीनाजोरीको असहाय खड़े देखते और चिल्लाते रह गये, परंतु गायोंको बेहोशकर ट्रकमें भरकर ये लुटेरे ले गये। इस हादसेके पश्चात् वृन्दावनकी कुछ गोशालाओंने दो-दो गेट गायकी सुरक्षाके लिये लगवाये हैं, परंतु बहुत

सारी गोशालाएँ धनके अभाव और उपेक्षाके कारण ऐसा

नहीं कर पायीं। ऐसी असुरक्षाकी स्थितिमें गलियोंमें घूमती

हुई या घरोंके सामने बँधी हुई गायोंकी सुरक्षा नहीं हो

हथिया ली है, वह गोशालाओंको वापस की जाय। बीते वर्षोंमें हर एक गाँव और छोटे शहरमें भी गायोंको प्रात: ही जंगलमें चरानेके लिये चरवाहे ले जाते थे। यह प्रथा अब न-के समान रह गयी है; क्योंकि जंगल अब बहुत कम रह गये हैं। इसका एक बड़ा साधारण हल यह है कि सरकार सरकारी जंगलोंको गायोंके चरनेके लिये छोड़ दे। गाय अगर दिनभर चरती है तो स्वस्थ तो रहती ही है और सायं वापस अपने स्थानपर आकर उसको बहुत कम खानेको चारा चाहिये होता है। गाय-सम्बन्धी

संस्थाएँ इस बारेमें विचार करें और राज्य सरकारोंको

बाध्य करें कि गोचारणकी भूमि और वनोंको केवल इसी

कामके लिये छोड दें। इससे गायोंका भला तो होगा ही

साथ ही जंगलोंको गोबर और गोमूत्रसे सींचती हुई गाय

आता है कि गायको समाजके लिये और कैसे अधिक

सन्तों और उद्योगपितयोंसे प्रार्थना—अब प्रश्न

उन जंगलोंको पोषित भी करेगी।

मिलता, परंतु जिस गतिसे गाय कट रही है, उससे

एक साधन यह भी है कि सारी गोचारण भूमि जो लोगोंने

गोचारण भूमिका प्रयोग—गायके बचानेका

आनेवाले वर्षोंमें गाँव भी इससे वंचित हो जायँगे।

उपयोगी बनाया जा सकता है। यह प्रश्न अपने आपमें पालनेमें अधिक रुचि भी लेंगे। बडे उद्योगपति साधनसम्पन्न बहुत अहम है और इसका एकमात्र उत्तर यह है कि तो होते ही हैं, उन्हें लाभदायक उद्योग चलानेकी कला भी जबतक गायके गोबर और गोमूत्रको बहुत बड़ी सम्पत्ति आती है। यह तभी सम्भव है जब समाज यह समझे कि नहीं माना जाता और उसको उपयोगमें नहीं लाया जाता गायको बचाना है तो पंचगव्यसे बनी वस्तुओंका अधिक-

तो ईश्वरकी महान् देन गायके पालनेमें कठिनाइयाँ तो आयेंगी ही। इसके पंचगव्य (दुध, दही, घी, गोबर एवं गोम्त्र)-से हर उस वस्तुका निर्माण हो, जो मनुष्यमात्रके लिये उपयोगी हो। इस कार्यको करनेके लिये छोटे उद्योगपति

तो कार्य कर सकते हैं, परंतु आजके स्पर्धाके युगमें बड़े उद्योगपित भी बढ़-चढ़कर ऐसे उद्योग लगायें और

ऐसे उद्योग लगायें और पूरी योग्यता और लगनसे इन पंचगव्यको गोशालाओं और किसानोंसे खरीदें तो वे गाय उद्योगोंको लाभपर चलायें। भगवान्से नाता जोड़नेका महत्त्व

(दिव्यज्योति पूज्या देवकी माताजी)

मनुष्यके जीवनका एक पहलू है-भाव-शक्ति। चराचर जगत्, हमारे उस प्यारे प्रभुकी ही अभिव्यक्ति है।

ये सब उनको प्रिय हैं। ये सब उनके अपने हैं। तो मुझे अब विचार-शक्तिके अतिरिक्त हम लोगोंको एक विशेष शक्ति

प्राप्त है, वह है भाव-शक्ति—प्रेमका भाव, श्रद्धा-भक्ति, विश्वासका तत्त्व। जैसे कार्य करनेकी क्षमता मिली है, जैसे भले-बुरेपर विचार करनेकी शक्ति मिली है, ऐसे ही श्रद्धा, भक्ति, विश्वास, प्रेम—यह सब भी मिला हुआ है।

यह भाव-पक्ष कहलाता है। तो इस भाव-पक्षका अबतक हमने भूल-मिश्रित उपयोग किया। इसलिये हमारे भीतर तरह-तरहकी आसक्तियाँ पैदा हो गयीं। अब हम अपनेको साधक कहते हैं। अब हम अपनेको सत्संगी कहते हैं।

अब तो इस बातपर हम तुल गये हैं कि इस शरीरका नाश होगा पीछे और हम अपने वास्तविक स्वरूपसे अभिन्न होंगे पहले। इस बातके लिये हम लोग तैयार हो गये हैं। अबतक खूब खेल-तमाशे देख लिये। खूब सुख-दु:खकी

लहरियोंमें डूबना-उतराना सब देख लिया। अब जो इस

जीवनका शेष भाग बचा है, वह तो सब प्रकारसे योग, बोध, प्रेमसे अभिन्न होनेके लिये है। शान्ति, स्वाधीनता और सरसतासे मिलनेके लिये है। अब इस निश्चयके अनुसार काम करना है।

नातेसे सब सम्बन्ध मानना छोड़कर अब प्रभुके नातेसे

क्या करना है ? अपने भाव-तत्त्वको पवित्र करनेके लिये देहका नाता मिटा करके, भगवत्-नाते सभीके प्रति सद्भाव और प्रेम रखना है। यहाँसे आरम्भ करेंगे। मेरा सम्बन्ध किससे है ? तो मेरा सम्बन्ध केवल एकसे है, अनेकसे नहीं है। मैंने कई ईश्वरविश्वासियोंको

से-अधिक प्रयोग करें। यह यदि सुचारु रूपसे हो तो

निश्चित है कि उद्योगपितयोंको ऐसे उद्योग लगानेमें और

उनका विस्तार करनेमें बल मिलेगा। इस कार्यमें हमारे

महानु संत जो गायकी सुरक्षाके लिये हर सम्भव उपाय करनेको तत्पर हैं, वह उद्योगपितयोंको प्रेरित करें कि वह

भाग ८९

अपने महाराजजीके पास यह कहते हुए सुना है कि हे महाराज! भगवान्को याद करने बैठी तो बहुत-सी बातें याद आने लगती हैं। तो महाराजजी कहते हैं कि देखो

भैया! जीवनमें तुमने केवल भगवान्का सम्बन्ध नहीं रखा है, दस सम्बन्ध तुम्हारे पहलेसे थे, अब तुमने ग्यारहवाँ सम्बन्ध परमात्माका मान लिया, तो जीवनमें एक बटा ग्यारह परमात्माकी याद आयगी और दस बटा ग्यारह संसारकी याद आयगी। ठीक है न ? हम लोगोंको क्या करना चाहिये ?

अगर प्रेम-तत्त्वको विकसित करना है और उसे उस प्यारे प्रभुके लिये परम पवित्र बनाना है तो आसक्तिका बोझ उसमेंसे निकाल देना पडेगा। प्रेम-तत्त्व जो है, वह तो ऐसा अलौकिक तत्त्व है कि आप कितने भी अपराधमें फँस जाइये, कितने

इसके लिये अनुभवी सन्तकी सलाह है कि शरीरके भी पतनके गड्टेमें चले जाइये, उस अविनाशी तत्त्वका नाश नहीं होता। हमारी भूलोंसे वह दूषित हो जाता है। उसके सम्बोग्रियमानमा ओरम्भक्तरे रिवर्स्ट्सारीम्बर्सार/वित्रावकृष्टि वसूर्यकानी MADETIWITH, LAN हि अपनी पुरुषि ही शि संख्या १२] व्यावहारिक अध्यात्म 'वह' ज्यों-का-त्यों है, कभी मिटा ही नहीं, कभी मिटेगा जिन सन्तोंने एक प्रभुसे नाता जोडा—जैसे मीराजीने कहा—'*मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई।*' दूसरा

भी नहीं। अपना सम्बन्ध रखना है—एक-से और सबके प्रति सद्भाव रखना है उस एकके नाते, तो भगवत्-नाते अगर जगतुको अपना मानोगे, तो भीतर राग-द्वेषका विकार

और हम लोग क्या करते हैं कि भगवान्का एक

चित्र सामने रख लिया और विविध प्रकारकी क्रियाओंसे,

तरह-तरहके उपायोंसे हम अपनेको उनके प्रति प्रेमभावको

प्रकट करनेके द्वारा पवित्र बनाना चाहते हैं। विविध

सम्बन्धोंका त्याग नहीं किया और सामने चित्र रख लो,

विग्रह रख लो और बहुत सामग्री जुटा लो, बहुत देरतक विधि-विधानसे पूजा करो तो भी एक सम्बन्ध अगर

जीवनमें नहीं है तो वह सजीव नहीं होता है। थोडी देरके लिये वहाँ बैठकर पूजा करना अच्छा लगता है। थोडी-

थोड़ी देरके बाद ध्यानमें आता है कि जल्दी-जल्दी

खत्म करके चलो, अब दूसरे काम हैं।

पैदा नहीं होगा। ईश्वरवाद यहाँसे आरम्भ होता है।

कोई मेरा है नहीं, वे जब पूजा करने बैठते हैं और उनके

प्रभुका प्रेम उनके हृदयमें भरता है तो पुजा करते-करते वे अपनेको भूल जाते हैं। अपनेको भूल जाते हैं तो क्रिया

खत्म हो जाती है और वे भावके स्वरूपमें हो करके प्रेमास्पदसे जुड़ जाते हैं। देह-धर्म वहीं छूट जाता है और मैंने अपनी

दशा क्या देखी है ? कि पुजा करते-करते दूसरी कोई बात याद आ गयी, कोई दूसरा काम याद आ गया, तो पूजा के

item को भूल जाती हूँ। अन्तर मालूम हुआ? एक भावमें

इतना रस उमडा कि उसमें अहं डूब गया—'मैंपन' रहा

नहीं—प्यारा रहा, प्यारेका प्यार रहा, प्रीतम रहा, प्रीतमकी

प्रीति रही। 'मैं' खत्म हो गया! तो जिस 'मैं' के भेदकी दीवारके कारण उससे हमारी दुरी मालूम होती थी, वह 'अहं' जो है, वह प्रेमकी धातुमें मिल गया।

[प्रेषक—श्रीअरविन्द शारदाजी]

-व्यावहारिक अध्यात्म

मशहूर सूफी सन्त उमरका स्वभाव था कि वे अपने पास आनेवाले शिष्यों और आगंतुकोंकी परीक्षा लेते थे।

वे ऐसे प्रश्न करते जिनके उत्तर देनेमें सामनेवालेको अड्चन होती और फिर उमर उसका समाधान कर देते थे।

इसके पीछे उमरका उद्देश्य परोपकार या लोकहितका सन्देश ही देना होता था। कहते हैं कि एक बार उमर

बगदाद-स्थित अपने ठिकानेसे जंगलकी ओर जा रहे थे। मार्गमें उन्हें एक चरवाहा मिला, जो बकरियाँ चरा रहा था।

उमरने उसकी परीक्षा लेनेकी ठानी, वे उसके पास गये और कहा—अपनी सैकड़ों बकरियोंमेंसे एक छोटी

बकरी मुझे दे दो। चरवाहेने मालिकका हवाला देकर ऐसा करनेमें असमर्थता जतायी। तब उमरने कहा इतनी बकरियाँ हैं, यदि एक कम हो जायगी तो मालिकको पता भी नहीं चलेगा, लेकिन चरवाहा टस-से-मस न हुआ। उसने कहा—मेरा मालिक तो यहाँ नहीं है, लेकिन वह जो सारी दुनियाँका मालिक है, मुझे देख रहा है, यदि मैं

एक भी बकरी आपको दुँगा तो भले ही मेरे मालिकको पता न चले, लेकिन उस बडे मालिकको तो पता चल ही जायगा। तब मेरे ऊपर उसके विश्वासका क्या होगा, अत: आप मुझे माफ करें।

उमर प्रसन्न हो गये। परीक्षामें चरवाहा सौ प्रतिशत खरा उतरा। उमर उसे लेकर उसके मालिकके पास पहुँचे। उन्होंने मालिकको पूरा किस्सा सुनाया। वह चरवाहा गुलाम था। उमरने उसके मालिकसे कहा—तुमने

इस खुदाके बन्देको अपना गुलाम क्यों बनाया? सैकड़ों बकरियोंमेंसे यह एक बकरीतक देनेको राजी नहीं हुआ। इसकी ईमानदारीको सलाम करना चाहिये। उमरके समझानेके बाद मालिकने चरवाहेको वर्षोंकी गुलामीसे आजाद कर दिया और साथमें हजारों अशर्फियाँ भी उसे उपहारमें दीं। उमरके लिये भी यह बड़ा दिन था,

जब उनका परोपकारका लक्ष्य तो पूरा हुआ ही, एक छोटे आदमीसे बड़ी शिक्षा भी हासिल हुई। (संत निरंकारी)

[प्रेषक—हरिकृष्ण नीखरा (गुप्त)]

जड़ी-बूटियोंकी शिरोमणि—तुलसी (श्रीराजीवकुमारजी वैद)

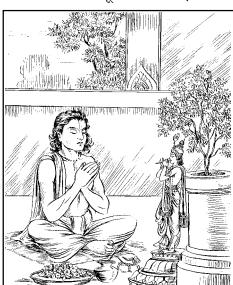
सर्वरोगनाशक और अद्वितीय स्वास्थ्यप्रदायक गुणों नुस्खेका प्रयोगकर उनके सैकड़ों भक्तोंको चमत्कारिक एवं विशिष्ट रुचिकर स्वादके कारण वनौषधियोंमें तुलसी लाभका अनुभव हुआ है। प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक

रानीके पदपर प्रतिष्ठित हैं। अतुलनीय रोगनिवारक गुणोंने डॉ॰ शरण प्रसादने अपने सैनीटोरियममें हृदय रोगके रोगियोंपर

इसका नाम तुलसी रखा है। तुलसी अर्थात् जिसकी कोई

तुलना नहीं। मनुष्य-शरीरका शायद ही कोई अंग ऐसा

हो, जिसपर इसका सुप्रभाव न पड़ता हो, वस्तुत: यह सर्वरोगनाशक संजीवनी बूटी है। जहाँ एक ओर प्राचीन



धर्मग्रन्थ इसके गुणोंके गीत गाते नहीं थकते, वहीं आधुनिक विज्ञान भी अनेक औषधीय तत्त्वोंकी उपस्थितिके आधारपर इसे संजीवनी बूटी सिद्ध करता है। तुलसीमें

अनेक जैव सक्रिय रसायन पाये गये हैं, जिनमें ट्रैनिन,

सेवोनिन, ग्लाइकोसाइड और एल्केलाइड्स प्रमुख हैं। साधारण रोगोंकी तो बिसात ही क्या; कैंसर, रक्तचाप, हृदयके वाल्वका रोग, मस्तिष्कका भयंकर रोग जिनमें

डॉक्टर-हकीम लोगोंने हार मान ली हो, तुलसी समूल नाश करनेकी शक्ति रखती है। इसी प्रकारके असाध्य करार

दिये गये रोगोंके निवारणहेतु एक ऊँची पहुँचवाले सन्त तुलसी-प्रयोगका निम्न नुस्खा बताते हैं — तुलसीके पत्तोंका

१० ग्राम रस और १० ग्राम शुद्ध शहद या चालीस-पचास

सेवन कराकर शत-प्रतिशत सफलतापूर्वक उन्हें रोगमुक्त किया है। सर्दी-जुकाम, बुखारमें प्राय: बड़े-बूढ़े तुलसीकी चायके सेवनकी सलाह देते हैं, पर यह सर्दी-जुकाम, खाँसी

तुलसीका औषधीय प्रयोग किया है। उन्होंने तुलसी काढ़ेका

ही नहीं, अन्य अनेकों व्याधियोंको दूर करनेकी सामर्थ्य

स्मरण-शक्तिका अभाव, पुरानेसे पुराना सिरदर्द, रक्तचाप,

रखती है। एक लम्बी फेहरिश्त है—गुर्दोंकी पथरी, सफेद दाग या कोढ़, शरीरका मोटापा; वृद्धावस्थाकी दुर्बलता, पेचिश, अम्लता, मन्दाग्नि, कब्ज, गैस, दिमागी कमजोरी,

श्वसन रोग, शरीरकी झुर्रियाँ आदि। तुलसी गुर्दीकी कार्य-क्षमता बढ़ाती है। इसके सेवनसे विटामिन 'ए' एवं 'सी' की कमी दूर होती है।

इतने सारे गुणोंपर मुग्ध होकर यदि कोई तुलसीका सेवन करना चाहे तो किसी भी सुविधाजनक ढंगसे प्रयोग कर सकता है, यथा—तुलसीकी चाय बनाकर (काढ़ारूपमें) या दो-चार पत्ते चबाकर ऊपरसे पानी

पीकर या रातको थोड़े-से पानीमें पत्ते डालकर रख दें सुबह उस पानीको पीयें। अन्य खाद्य पदार्थोंमें मिश्रित करके आदि। ताजी अवस्थामें तुलसीपत्रका उपयोग ही

चूर्णका सेवन कर सकते हैं। जड़ एवं बीजचूर्ण या समग्र सूखे पौधेका चूर्ण भी इस्तेमाल किया जा सकता है।

उल्लेखनीय है कि तुलसीके बीजोंमें वीर्यको गाढ़ा बनानेकी अद्भुत क्षमता होती है। बीजचूर्ण एक उत्तम वाजीकारक औषधि है। आचार्य प्रियव्रत शर्माके अनुसार

मूत्रदाह एवं मूत्र-विसर्जनमें कठिनाई तथा ब्लैडरकी सूजनमें एवं पथरीमें बीजचूर्ण तुरंत लाभ करता है। कुष्ठकी यह सर्वश्रेष्ठ औषधि है। डॉ० जी० नादकर्णीके

श्रेष्ठ है, यदि उपलब्ध न हो तो छायामें सुखाये पत्तोंके

अनुसार तुलसीमें कुछ ऐसे गुण हैं, जिनके कारण यह शरीरकी विद्युतीय संरचनाको सीधे प्रभावित करती है।

ग्राम ताजा दही सुबह-दोपहर-शामको लेना चाहिये। इस

कहो मारुति! गिद्धराज कैसे हैं ? श्रीरामकथाका एक

कहो मारुति! गिद्धराज कैसे हैं?

संख्या १२]

पावन-प्रसंग

(आचार्य श्रीरामरंगजी)

'वत्स मारुति! हमें बताओ, हमारे प्रिय पितृव्य, अयोध्याधिपति श्रद्धेय पिताश्रीके परम मित्र, उन्हींकी

सौमित्रि, जिनका शौर्य अद्वितीय कहा जाता है, वे तो उनके सामने आते ही उनके पंखोंमें गुदगुदी-सी करते हुए, ऐसे परिहास-सुहास्यकी धारा बहाते थे कि मैं

भाँति वात्सल्यनिधि गिद्धराज जटायु कैसे हैं? हमारे

प्रभुके साथ हँसती क्या खिलखिलाती रह जाती थी। मिथिला और अयोध्या दोनों विस्मृत हो जाती थीं। न जाने कहाँ-कहाँसे वे दुर्लभ फल, डालियोंसहित ले आते

थे कि हम खाते रह जाते थे। एक दिन हमने कहा, देव! आप तो हमें ऐसी कुक्षिम्भरि (पेट्र), सुस्वाद्-व्यामोही,

विक्षिप्ता बना डालेंगे कि हमें बार-बार प्रभुसे आग्रह कर-करके पंचवटीमें आपका अतिथि बनने आना ही पड़ेगा।'

'अम्बिके! गिद्धराज, वे गिद्धराज अपने परम मित्र अयोध्याधिराजके साथ विहार करने नन्दन वन चले गये।' 'हाय' कहते हुए निमिनन्दिनी कुररीकी भाँति

धीरे-धीरे बिलखती-बिलखती बोलीं, 'जिन्हें हम वयोवृद्ध मानते रहे, उनके भीम पराक्रमकी मैं साक्षी हूँ। न

जाने कहाँसे हमारी पुकार सुनकर उड़ते हुए आ गये। पुष्पक विमानके तुंदिल (मोटे) पटोंको कर्पट (चिथड़े) करते हुए, स्तम्भोंके मध्य इक्षु (ईख-गन्ना)-के सघन

क्षेत्रमें मत्त मातंगकी भाँति प्रवेश कर गये। मघा

मेघमालाको चपल चंचला भी क्या चीरती होगी, जैसे वे नि:शस्त्र सनाह-सज्जित अनेकानेक शस्त्रास्त्रधारी दशाननपर टूट पडे। विशाल पंख फटकारकर उसका

किरीट कहाँ उड़ा दिया, वह देखता रह गया। प्रखर चंचुके प्रहारोंसे उसका कवच क्षत-विक्षत कर डाला, स्कन्ध-वक्ष-भुजाएँ रक्तकी सरिताएँ सरसाने लगीं।

उसकी उठी हुई गदाको सिरसे ऐसे ठुकराया कि वह उसीपर गिरती हुई, गिरकर रह गयी। उसे पुन: उठानेके उद्योगमें वह स्वयं गिर गया। उसके त्रिशूलको आता देखकर, दूर उड़कर, विमानके शिखरपर जाकर बैठ

गये। फहराती हुई ध्वजाको नोंचकर आकाशमें लहरा

दिया। वह धनुष लेकर शर रख ही रहा था कि उन्होंने प्रत्यंचा ही काट डाली। दशकन्धरसे समर करते जाते.

कहते जाते, 'पुत्रि! भयभीत मत होना। राघव यहाँ नहीं हैं, तो कोई चिन्ता नहीं, उनका पितृव्य तो यहाँ है। यह तुम्हारा हरण करके कहाँ जायगा, अपने प्राणोंका हरण कराकर, यहीं कंकिनीके अंकमें अन्तिम समाधि लेगा।

धैर्य रख, सुस्नुषे! (प्रिय पुत्रवधू!) धैर्य रख।' 'एक बार तो उन्होंने मुझे इस नृशंससे मुक्त भी करा लिया था, किंतु तभी उसने चन्द्रहास खड्गसे उनके

पंख काट डाले। पंचवटीके वृक्षोंके पत्रोंको अपने रक्तसे

रँगते हुए, वे प्रलयकालकी अगाध जलराशि-जैसे अपने ही रक्तकुण्डमें सूर्य-खण्डोंकी भाँति विलीन होकर रह गये। ऋषियोंकी भाँति शास्त्रोंकी व्याख्या करनेवाले,

बटुकोंकी भाँति सस्वर मन्त्रोंके उच्चारणसे सामगानाचार्योंको भी चिकत करनेवाले, इस वैदेहीकी रक्षामें अपने प्राण

विसर्जित करते हुए वीरगतिको प्राप्त हो गये। मैं अपने

मस्तकपर लगे इस पापका प्रायश्चित कैसे कर पाऊँगी।' शोकविह्नल जानकीने धीरेसे उठकर, जलझारीसे जल लेकर गिद्धराजको श्वसुरके रूपमें जलांजलि प्रदान

करते हुए कहा, 'आंजनेय! अब तुम प्रभुके पास जा रहे हो। उनके तृणरूपी जिस बाणके प्रतापसे सौमित्रि भी अपरिचित हैं, उन्हें कागवेषी देवेन्द्रपुत्र जयन्तके

नेत्रहर्ता उस बाणका स्मरण कराना। मेरा प्रभुके प्रति यही सन्देश है।'

|कहानी अछूत (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) कई बार अपने घर बुलाकर गोपाल और माता-पिताको सेठ रामजीलाल अपने कस्बेमें ही नहीं, बल्कि प्रान्त-

भरमें प्रसिद्ध थे। उनके विभिन्न प्रकारके पाँच-छ: कारखाने

दिखा भी दिया था। एक तरहसे बात पक्की हो गयी

थी. केवल नेगचार होने बाकी थे।

उसी वर्ष बीकानेरके उत्तरी हिस्सेमें अकाल पडा। हजारों व्यक्ति अपने गाँव छोड़कर पशुओंके साथ

मालवाकी तरफ जाने लगे।

सेठजीने अपने कस्बेमें उनके विश्रामके लिये व्यवस्था कर रखी थी। एक-दो दिन वहीं रहकर यात्री

सुस्ता लेते थे। दूसरे स्वयंसेवकोंके साथ-साथ गोपाल और सुमन भी इस काममें दिलचस्पी लेते थे। एक दिन वे इसी प्रकारके एक यात्रीदलकी व्यवस्था कर रहे थे कि उनमेंसे एक अधेड-सा व्यक्ति गोपालको घूर-घूरकर

देखने लगा। थोडी देरमें अपनी पत्नीको भी बुला लाया। सुमनने हँसकर कहा कि बाबा! इस प्रकार आप क्या देख रहे हैं; और आपकी आँखोंमें आँसू क्यों हैं?

न होनेसे पति-पत्नी दुखी रहते थे। एक बार वे कुम्भके पर्वपर यात्राके लिये हरिद्वार गये। वहीं उन्हें दो वर्षका एक बच्चा सेवा-समितिके स्वयंसेवकोंद्वारा मिला। सेठानी तो लडकेको गोद लेते ही निहाल हो गयी। उसका गौर-वर्ण और सुन्दर रूप-रंग देखकर ही अनुमान लगा लिया कि जरूर यह किसी कुलीन घरानेका है। अपने गाँव आकर बहुत धूम-धामसे गोदके नेगचार किये गये। हजारों व्यक्तियोंको भोज दिया गया। इस अवसरपर एक अस्पताल और एक कॉलेजकी नींव डाली गयी। बच्चेका सुन्दर-सा नाम रखा गया-गोपाल कृष्ण। उस समय लोगोंने भी ज्यादा पूछताछको जरूरत नहीं समझी।

थे, जिनमें हजारों मजदूर काम करते थे। विदेशोंके साथ भी आयात-निर्यातका करोडों रुपयेका कारोबार था। व्यापारके

सिवा सार्वजनिक क्षेत्रमें भी अच्छा नाम था। उनके द्वारा

संचालित कई स्कूल, कॉलेज, छात्रावास और अस्पताल

थे। वे निम्बार्क-सम्प्रदायके वैष्णव थे, इसलिये उन्होंने

अपनी हवेलीके पास ही श्रीनाथजीका एक विशाल मन्दिर

बनवाया था. जिसमें घरके हर व्यक्तिके लिये नित्य दोनों

सब तरहसे सम्पन्न और सुखी परिवार था परंतु सन्तान

समय जाकर प्रसाद लेना जरूरी था।

रात-दिन बढती गयी।

बच्चेका आना कुछ ऐसा शुभ हुआ कि एक

वर्षके भीतर ही उनकी एक पुत्री हुई। धन-दौलत भी

इसी प्रकार १७-१८ वर्ष आनन्दसे व्यतीत हो गये। गोपाल और छोटी बहन सुमन दोनों कॉलेजमें पढते थे।

थोड़ी देर तो वृद्ध चुप रहा, फिर सहमते हुए कहा-आपसमें सगे भाई-बहनसे भी ज्यादा प्यार था। गोपाल

'बाई-सा, मेरा लडका रामू आजसे १८ वर्ष पहले

हरिद्वारके कुम्भ मेलेमें गुम हो गया था। उसका रंग भी

इसी तरह साफ था। उसके बायें गालपर भी इसी

प्रकारका निशान था। कुँवर साहबको देखकर हमें अपने खोये हुए पुत्रकी याद आ गयी है।' घर जाकर सुमनने पिताजीको जब यह बात कही

जाना चाहता था, परंतु सेठजी शादी करके उसे व्यापारमें लगा देना चाहते थे। सुमनने अपनी सुन्दर और सम्पन्न तो उनके चेहरेपर उदासी छा गयी। Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE | सहलाका चयन भी कर लिया था—यहतिक कि उसकी

एम०ए० करनेके बाद पढनेके लिये वह विदेश

पढ़नेके सिवा खेल-कूदमें भी हमेशा प्रथम या द्वितीय

रहता था। एम०ए० में उसे कॉलेजमें प्रथम स्थान मिला।

संख्या १२] अछूत ****************************** पता चला कि लोग जातिके चमार हैं। उस वर्ष कुम्भ-बाँधकी तरह टूट गया। इतने बड़े प्रतिष्ठित सेठ, छोटे स्नान करनेके लिये गये थे। वहीं उनका एकमात्र पुत्र बच्चेकी तरह जोर-जोरसे रोने लगे। कहने लगे—'मैं भले ही चमार हो जाऊँगा, परंतु किसी हालतमें भी तुम्हें नहीं भीड़में खो गया, जिसका आजतक पता नहीं चला। लड़केके कुछ और भी चिह्न थे क्या ? यह पूछनेपर उसने छोड्ँगा। हो सकता है, तुमने जन्म अछूतोंके घर लिया कहा कि उसके दायें हाथमें चोटका एक निशान भी था। हो, परंतु भला कोई बताये तो कि तुम-जैसे धार्मिक और ये सब बातें गोपाल और उसकी माँ भी सुन रहे थे। निष्ठावान् युवक ऊँची जातिवालोंमें भी कितने हैं ? राम उस समय वृद्धको १००-२०० रुपये देकर उसे यह कहकर तो १४ वर्षके लिये ही वनवास गये थे, परंतु तुम मुझे विदा किया कि तुम्हें इस प्रकारकी फ़िजुल बातें नहीं करनी बुढ़ापेमें सदाके लिये छोड़कर जाना चाहते हो!' चाहिये। अच्छा हो कि तुम लोग कल यहाँसे चले जाओ। इधर हवेलीमें सुबहसे ही किसी-न-किसी बहाने सगे-सम्बन्धी आकर इकट्ठे हो गये थे और झूठी परंतु ऐसी बातें छिपी नहीं रहतीं। लोगोंको अपना हर्ज करके भी दूसरोंके छिद्र ढूँढ़नेका शौक रहता है। सहानुभूति दिखा रहे थे। सब कुछ जानते-बूझते हुए भी यह बात धीरे-धीरे सारे कस्बेमें फैल गयी। 'क्या हुआ, कैसे हुआ' आदि पूछ रहे थे। साथमें उन इधर सेठजी और सेठानीजी दोनों कमरा बन्द चमारोंमेंसे भी कुछको ले आये थे। थोडी देरमें ही गोपाल उन सबके सामने जाकर करके भीतर बैठ गये। बहुत कहने-सूननेपर भी भोजनके लिये बाहर नहीं निकले। कहने लगा कि आपने जो कुछ सुना है, वह सब सत्य गोपाल हर प्रकारसे योग्य और समझदार था। वस्तु-है। मैं कोलायतके चमारोंका लड़का हूँ। इसी समय घर स्थिति उसकी समझमें आ गयी थी। वह एक निश्चयपर और आपका गाँव छोड़कर जानेको तैयार हूँ। कृपा आकर दूसरे दिन सुबह सुमनके पास जाकर कहने लगा, करके आप सेठजीको क्षमा कर दें। उन्होंने जो कुछ 'बहनजी! जो कुछ होना था, वह तो हो गया। परमात्मा किया, बिना जानकारीके किया है। फिर बड़े-से-बड़े जानता है कि इसमें मेरा कोई कसूर नहीं है, फिर भी कुसूरका भी प्रायश्चित तो होता ही है। मेरे कारण आप लोगोंको इतना बड़ा अपमान सहना परंतु सेठजी किसी तरह भी गोपालको छोड़नेको पड़ा। अब किसी तरह पिताजी और माताजीको भोजन तैयार नहीं थे। आँसूकी धारा बह रही थी, वे उसे करानेका उपाय करो, वे कलसे ही भूखे-प्यासे हैं।' जबर्दस्ती गले लगाकर कहने लगे, 'सुमन भी कपडे सुमनने देखा कि जो भाई उससे हमेशा हँसी-मजाक बाँधकर तुम्हारे साथ जानेकी तैयारी कर रही है, फिर करता रहता और सुमन कहकर पुकारता था, वह 'बहनजी' भला हम अकेले इस घरमें रहकर ही क्या करेंगे? किसी कह रहा है और सहमा-सा थोडी दुरीपर बैठा हुआ है। दुसरे गाँवमें जाकर चमारोंके साथ रह लेंगे।' उन दोनोंने बहुत अनुनय-विनय करके कमरेका गोपाल चाहता तो सेठजीके इन स्नेहपूर्ण उद्गारोंका दरवाजा खुलवाया। देखा कि एक दिनमें ही पिताजी लाभ उठा सकता था, परंतु उसने सुमन और सेठजीको वृद्धसे लगने लगे हैं। माता एक तरफ अचेत पड़ी हुई अनेक प्रकारसे समझा-बुझाकर वहाँसे विदा ली। दूसरे दिन हैं। अन्य दिनोंकी तरह आज गोपालने पिताके पैर नहीं ही एक यात्रीदलके साथ मालवाके लिये खाना हो गया। छुए। कुछ दूरीसे कहा, 'पिताजी, मेरा आपका सम्बन्ध बहुत अनुनय-विनयके बावजूद भी उसने घरसे दो-चार धोती-कुर्तोंके सिवा अन्य कोई भी वस्तु साथमें नहीं ली। इतने दिनोंका ही ईश्वरको मंजूर था। अब आप हिम्मत करके मुझे विदा दें। माताजीका बुरा हाल है, उन्हें भी विदाके समय एक प्रकारसे सारा गाँव ही उमड़ सान्त्वना दें। आपने जितना लिखा-पढ़ा दिया है, उससे पड़ा था। कलतक इस घटनामें लोग ईर्ष्यायुक्त रस ले रहे थे, परंतु आज वे फूट-फूटकर रोते हुए देखे गये। २००-३०० रुपये माहवार आसानीसे कमा सकूँगा।' बहुत देरका रोका हुआ उद्वेग एक बरसाती नालेके [प्रेषक — श्रीनन्दलालजी टांटिया]

भाग ८९

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

गोपी-प्रेम

भगवान्के नित्य-नव प्रेमकी लालसा उत्पन्न हो जाती है। तब किसी-किसी अधिकारीको गोपीभावकी प्राप्ति होती है।

गोपी-प्रेमकी बात वहीं कह सकता है, जिसको गोपीभाव प्राप्त हो गया हो। सुननेका अधिकारी भी वही है। जबतक स्थूल, सूक्ष्म या कारण-किसी भी शरीरमें अहंभाव है, तबतक मनुष्यको गोपीभाव प्राप्त नहीं होता; अत: वह गोपीप्रेमका अधिकारी नहीं है। उद्भव-जैसे ज्ञानी और योगी, जो भगवान् श्रीकृष्णके सखा थे, जब व्रजमें गये, तब गोपियोंके प्रेमको देखकर ज्ञान और योगको भूल गये। उलटा अपने स्वामी और सखा श्रीकृष्णको हृदयहीन और कठोर बताने लगे और उन गोपियोंके प्रेमकी प्रशंसा करने लगे। यहाँतक कि व्रजके लता-पत्ता बननेमें भी अपना सौभाग्य मानकर गोपियोंकी चरण-रजकी कामना करने लगे। उन गोपियोंके प्रेमको भला कोई साधारण मनुष्य कैसे समझ सकता है? जबतक मनुष्यके शरीरमें अभिमान रहता है, तबतक उसको किसी-न-किसी प्रकारके संयोगजनित सुखका लालच रहता है। गोपीभाव प्राप्त करनेके लिये वस्तुके संयोग और क्रियाजन्य सुखकी तो कौन कहे, चिन्तनतकके सुखका भी त्याग करना पड़ता है। जबतक यह भाव रहता है—अमुक वस्तु, अमुक व्यक्ति, अमुक परिस्थितिसे सुख मिलेगा, तबतक

मनुष्य उनका दास बना रहता है। उसके मनमें दूसरोंको सुख पहुँचानेका भाव उत्पन्न नहीं होता। यही स्वार्थभाव है, जिसके रहते हुए गोपीभावकी बात समझमें नहीं आ सकती। मानव-जीवनमें सत् और असत् दोनोंका संग रहता

है। जिसमें केवल असत्का संग है वह भी मनुष्य नहीं है; क्योंकि असत्का संग तो पश्-पक्षी आदि तिर्यक् योनियोंमें भी होता है एवं जिसमें केवल सत्का संग है, उसे भी मनुष्य

है। शरीर, संसार और भोगोंका संग ही असत्का संग है और अनन्त जीवन तथा नित्य आनन्दकी लालसा ही सत्का संग

नहीं कहा जा सकता। वह मनुष्यभावसे अतीत है। अत:

उपलब्धि होती है। फिर साधारण मनुष्य उस गोपी-प्रेमकी बात कैसे समझ सकते हैं? व्रजमें प्रवेशका अधिकार प्राप्त करे और उसके बाद भगवानुकी

ही सत्का संग अर्थात् भगवत्प्रेमकी लालसा उत्पन्न होती है। अतः जिस साधकको गोपीभाव प्राप्त करना हो और उनकी लीलामें प्रवेश करके गोपी-प्रेमकी बात समझनी हो. उसे चाहिये कि देहभावसे उत्पन्न होनेवाली सम्पूर्ण भोगोंकी वासनाका त्याग कर दे; क्योंकि जबतक देहभाव रहता है-में पुरुष हूँ, में स्त्री हूँ-ऐसा भाव होता है, तबतक गोपी-चरित्र सुनने और समझनेका अधिकार प्राप्त नहीं होता। फिर गोपी-प्रेम क्या है-यह तो कोई समझ ही कैसे सकता है। जब श्यामसुन्दरके प्रेमकी लालसा समस्त भोग-वासनाओंको खाकर सबल हो जाती है, तब तो साधकका व्रजमें

देहसे असंग होनेपर ही मनुष्य भोगवासनासे रहित हो

सकता है। दोषोंका त्याग ही गुणोंका संग है। भोगोंकी चाह

रहते हुए गुणोंका उदय और दोषोंका अभाव नहीं होता। अत:

यह समझना चाहिये कि सब प्रकारकी चाहका अन्त होनेपर

प्रवेश होता है। उसके पहले तो व्रजमें प्रवेश ही नहीं होता। यह उस व्रजकी बात नहीं है, जहाँ लोग टिकट लेकर जाते हैं। यह तो उस व्रजकी बात है, जो प्रकृतिका कार्य नहीं है, जहाँकी कोई भी वस्तु भौतिक नहीं है, जिसका निर्माण दिव्य प्रेमकी धातुसे हुआ है। जहाँकी भूमि, ग्वाल-बाल, गोपियाँ, गायें और लता-पत्ता आदि सब-के-सब चिन्मय हैं। जहाँ जडता और भौतिक भावकी गन्ध भी नहीं है, उस व्रजमें प्रवेश हो जानेके बाद भी गोपीभावकी प्राप्ति बहुत दूरकी बात है। दास्यभाव, सख्यभाव और वात्सल्यभावके बाद कहीं गोपीभावकी

जबतक देहभाव रहता है, तभीतक भोगवासना और अनेक प्रकारके दोष रहते हैं और तभीतक दोषोंका नाश करके चित्तशुद्धिके लिये साधन करना रहता है। चित्तका सर्वथा शुद्ध हो जाना और सब प्रकारसे असत्का संग छूट जाना ही व्रजमें प्रवेश है। अतः जिस साधकको गोपी-प्रेम प्राप्त करना हो, उसे चाहिये कि पहले मुक्तिके आनन्दतकका लालच छोड़कर

कृपापर निर्भर होकर गोपीभावको प्राप्त करे।

गोपीभाव प्राप्त करनेके लिये स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरका तथा उनसे सम्बन्ध रखनेवाले समस्त भोगोंका संग विवेकद्वारा छोड़ना पड़ता है। उसका त्याग सत्संगसे ही हो सकता है। सांसारिक सुखभोगमें क्या-क्या दु:ख है, इसकी असलियतका ज्ञान सुखभोगसे उन साधकोंको होता है, जो अपने प्राप्त विवेकका आदर करते हैं। विवेकका आदर ही सत्संग है। इस सत्संगसे सुखभोगकी रुचि मिट जाती है और

साधनोपयोगी पत्र संख्या १२] साधनोपयोगी पत्र भगवत्प्राप्ति करानेवाली मृत्यु ही 'सुधरी मृत्यु' है। इस (१) सभी रूपों तथा स्थितियोंमें भगवान्को देखें प्रकार मृत्यु सुधरे, इसके लिये प्रयत्नमें तुरंत लग जाना सप्रेम हरिस्मरण! आपका पत्र मिला था। आपका चाहिये। स्वास्थ्य इधर ठीक नहीं रहता, सो यह तो शरीरका आप बुद्धिमान् हैं, सब समझते हैं। इस जगत्-स्वरूप ही है। आप विद्वान् हैं; आपने शास्त्रोंका अध्ययन प्रपंचमें कहीं कुछ भी सार नहीं है। वास्तवमें जगत् है किया है; आप जानते हैं—जन्म-मृत्यु-जरा-व्याधि इस ही नहीं; सर्वथा असत् है, अज्ञानसे ही दिखायी दे रहा पांचभौतिक शरीरके साथ लगी ही हुई हैं। जो बना है, है और यदि कहीं अज्ञानकी सत्ता मान लेनेपर यह 'है' वह नष्ट होगा ही—जो जन्मा है, वह मरेगा ही। मृत्युसे तो है—क्षणभंगुर, अनित्य, अपूर्ण, दु:खयोनि, दु:खालय। डरनेकी आवश्यकता नहीं। विचार करें तो जन्मकी अतएव इससे विरक्त होकर भगवत्स्मृतिमें लग जाइये— अपेक्षा मृत्युमें कल्याणकी सम्भावना अधिक है और चाहे इसे 'दु:खरूप' मानकर, चाहे सर्वथा 'असत्' मानकर। मृत्यु होते ही परमानन्दस्वरूपकी प्राप्ति सम्भव है। जन्म यों तो सारी ही उनकी लीला है। भगवान्की ग्रहण करनेमें तथा जन्म होनेपर शिशु-अवस्थामें अज्ञानतामें लीलामें और लीलामय भगवान्में नित्य अभेद है; अतएव दु:ख है; वह अज्ञानजनित दु:ख किसी प्रकार मिटाया अस्वस्थता और मृत्युके रूपमें भी उन लीलामयकी नहीं जा सकता; पर मृत्युके समय यदि सावधानी रहे तो स्वरूपाभिन्न लीला ही हो रही है। यह समझकर इस मृत्युकालमें सुख रहता है और मृत्यु होते ही 'परम सुख' अस्वस्थतामें भी उनके मंगल दर्शन कीजिये। यही मिल सकता है। 'जन्म' होनेपर अकल्याणकी कोई आपके रोगकी परम औषधि है। शेष भगवत्कृपा। सम्भावना ही नहीं; क्योंकि फिर जन्म ही नहीं होता। तन्त्र-मन्त्रके नामपर ठगी सुधरी मृत्युका अर्थ है-मृत्युके समय हमारी ब्राह्मी स्थिति रहे या श्रीभगवान्की अनन्य अखण्ड स्मृति रहे। प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका कृपापत्र जहाँ भगवान्की अखण्ड स्मृति है, वहाँ जगत्की सर्वथा मिला। आपने जो घटनाएँ लिखीं और तान्त्रिकों तथा विस्मृति है। ऐसी स्थितिमें मृत्यु सुखपूर्वक होती है और ज्योतिषियोंके द्वारा बार-बार धोखा खाने एवं भयानक मृत्युके उपरान्त तुरंत ही मृत्युकालीन भगवत्स्मृतिके रूपसे नुकसान उठानेकी बात लिखी, सो अवश्य ही बडे अनिवार्य फलस्वरूप भगवत्प्राप्ति हो जाती है; जीव दु:खकी बात है। मेरे विश्वासके अनुसार तन्त्र-मन्त्र, कृतकृत्य हो जाता है। उसके प्रयोग, ज्योतिषशास्त्र—फलित ज्योतिष, ग्रहशान्ति-कर्म आदि सब सत्य हैं। अनुष्ठानोंसे देवता प्रत्यक्ष होते मृत्यु कब आ जाय, इसका पता नहीं; अभी अगले ही क्षण मृत्यु हो सकती है। अतएव अभीसे भगवान्की हैं, देवाराधनसे कार्योंमें सफलता प्राप्त होती है और अखण्ड स्मृतिका साधन करने लगना चाहिये। चाह शास्त्रीय प्रबल अनुष्ठानोंसे नवीन प्रारब्धका निर्माण भी सच्ची तथा तीव्र होगी और भगवत्कृपाका भरोसा होगा होता है-सिद्धान्तत: ये सभी सत्य हैं, परंतु इनके नामपर

अखण्ड स्मृतिका साधन करने लगना चाहिये। चाह शास्त्रीय प्रबल अनुष्ठानोंसे नवीन प्रारब्धका निर्माण भी सच्ची तथा तीव्र होगी और भगवत्कृपाका भरोसा होगा होता है—सिद्धान्तत: ये सभी सत्य हैं, परंतु इनके नामपर तो भगवान्की स्मृति अखण्ड हो जायगी—वही अनन्य आजकल ठगी और धोखाधड़ी बहुत चल रही है। मेरी हो जायगी। फिर मृत्यु चाहे जब आ जाय, आपके जानकारीके सम्बन्धमें पूछा, सो सच्ची बात तो यह है मनकी वृत्ति उसे भगवत्स्मृतिमें ही लगी मिलेगी। अतः कि दो—एक अनुभवी पुरुषोंके सिवा शेष लोगोंमें मुझे वह मृत्यु बड़ी मंगलमयी बन जायगी; सारी भावी अधिकांशमें या तो अनुभवहीन तथा क्रियाशून्य केवल मृत्युओंको मारकर वह स्वयं ही मर जायगी। ऐसी शास्त्र पढकर बतानेवाले लोग मिले या धोखा देकर पैसे

ऐंठनेवाले। कई ज्योतिषियोंके चक्करमें पड़कर लाखों-ही शास्त्रोंपर अश्रद्धा उत्पन्न करानेमें मैं कारण नहीं करोडों रुपयोंकी तथा मान-प्रतिष्ठाकी हानि सहन बनना चाहता। अतएव आपको क्या लिखुँ। आप करनेवाले लोगोंकी घटनाएँ मैं जानता हूँ। ऐसे कई किसीके भी फेरमें न पड़ें। उचित समझें और कर सकें कथित तान्त्रिक तथा सफल मन्त्रानुष्ठानकारी लोगोंसे तो स्वयं श्रद्धापूर्वक भागवतोक्त 'गजेन्द्रस्तुति' और मेरा काम पड़ा है, जो लिखने-पढ़नेमें और लम्बी-चौड़ी 'नारायणकवच' के ग्यारह-ग्यारह पाठ प्रतिदिन कीजिये। डींग हाँकनेमें बड़े ही चतुर हैं, पर लोगोंको बड़ी-बड़ी ये दोनों पुस्तकें गीताप्रेससे प्रकाशित हैं। साथ ही-आशा-विश्वासकी कल्पित कथाएँ सुनाकर उनके लिये सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके। सफल अनुष्ठानको या यन्त्रादि निर्माणको बात कहकर शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते॥ हजारों-हजारों रुपये ठगते रहते हैं। मैं अनुभवी सफल —इस मन्त्रका सम्पुट लगाकर पैंतालीस दिनोंतक तान्त्रिकों तथा अनुष्ठान बताने-करनेवाले लोगोंकी खोजमें दुर्गासप्तशतीका प्रतिदिन एक पाठ कीजिये। आशा है, रहा—बहुत-से प्रसिद्ध लोगोंसे मैंने सम्पर्क स्थापित इससे आपको लाभ होगा। शेष भगवत्कृपा। किया; क्योंकि मैं उनके द्वारा विपत्तिग्रस्त लोगोंको भगवानुके मंगलविधानपर विश्वास करनेसे विपत्तिसे बचाना चाहता था, परंतु इनके प्रयोगकी सफलताके द्वारा मुझे पूरा विश्वास करानेवाले विरले ही मिले। जो शान्ति मिलती है एक-दो सज्जन मिले थे, वे इस समय संसारमें नहीं हैं। सम्मान्या बहन, सस्नेह हरिस्मरण। आपका पत्र हस्तरेखा देखकर ठीक जन्म-कुण्डली बना देनेवाले, मिला। आपका दु:ख यथार्थ है और यह मिटना भी मुकप्रश्नको या प्रश्न लिखकर दूसरेकी मुद्रीमें रखे हुए चाहिये; पर पता नहीं, प्रारब्धके भोग कैसे हैं। आप अपने मनमें अपने पतिके प्रति सदा सद्भाव रखिये, उनकी

भाग ८९

मंगलकामना कीजिये, जो करती ही हैं। जो कष्ट वे

आपको दे रहे हैं—उसे भगवान्का विधान मानकर सहन

कीजिये। आपका इस जगत्का सम्बन्ध आरोपित है।

प्रश्नको अक्षरशः बतानेवाले, बिना देखे बही-खातोंमें कहाँ क्या लिखा है-यह बतानेवाले, मनकी बात बता देनेवाले, फल-मिठाई-मेवा, रुपये-पैसे आदि मँगा देनेवाले एवं अन्यान्य चमत्कार दिखानेवाले तथा सिद्धियोंकी बडी-बडी बातें करनेवाले भी कई मिले। पर उनमें प्राय:

यहाँ तो स्वाँगके अनुसार अनासक्तभावसे खेल करना है। सभी पैसे बटोरनेवाले ही मिले और उन्होंने भविष्यकी आप 'शरीर' तथा 'नाम' नहीं हैं, आत्मा हैं, आपका जो कुछ महत्त्वपूर्ण बातें बतलायीं, उनमेंसे शायद ही सम्बन्ध भगवान्से है। भगवान् आपको अपने धाममें कोई सही निकली। सुख-निवास देनेके लिये इन दु:खोंके द्वारा तपाकर आपकी ही भाँति मेरे पास बहुत-से लोग अपने-पवित्र कर रहे हैं। इन्हें दु:ख न मानकर भगवान्का अपने अभाव, दु:ख-कष्टोंको लेकर आते हैं, पत्र मंगलकारी मंगल विधान मानिये। भगवान् आपके नित्य लिखते हैं, मुझसे किन्हीं अच्छे, अभाव तथा कष्ट-सुहृद् हैं—वे कभी आपका अहित नहीं करते। जैसे दु:खोंको अनुष्ठानादिके द्वारा दूरकर सकें-ऐसे पुरुषोंके सुयोग्य सर्जन रोगीके कल्याणके लिये उसके अंग नाम-पते पूछते हैं; पर बार-बार धोखा खाये जानेके काटता (ऑपरेशन करता) है, वैसे ही इसे परम सुहृद् कारण मैं किन्हींका भी नाम-पता उन्हें नहीं बता भगवान्का किया हुआ ऑपरेशन मानिये। भगवान्ने सकता। इसीलिये आपको भी ऐसे नाम-पते बतानेमें कहा है कि 'मेरी सुहृदयतापर विश्वास करते ही, उसे असमर्थ हूँ। पहले किन्हींके सफल अनुष्ठानको देखकर जानते ही शान्ति मिल जाती है'— मुझे स्वयं उनपर पूरा विश्वास हो जाय, तब मैं दूसरोंको सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छिति।

उमात्ततपांक्रकाठकँडटअत्तथक्क्रहारेग्रेहेनके।स्पृष्ठक्रेशेंवेडसै:वृद्धार्थिharma शेषMश्राव्यक्रिणां H LOVE BY Avinash/Sha

व्रतोत्सव-पर्व

व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७२, शक १९३७, सन् २०१६, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, माघ कृष्णपक्ष तिथि दिनांक

नक्षत्र

प्रतिपदा प्रातः ७। २ बजेतक सोम

आश्लेषा रात्रिमें ९।३९ बजेतक २५जनवरी द्वितीया 🦙 ७। ४८ बजेतक 🛮 मंगल 🛮 मघा बुध

पु०फा० 🗤 १। १३ बजेतक

चित्रा अहोरात्र

चित्रा दिनमें ८। ४२ बजेतक रवि सोम स्वाती '' ११।१३ बजेतक

विशाखा "१। २७ बजेतक मंगल

३१ " अनुराधा 🕶 ३। २० बजेतक बुध

शनि

अष्टमी रात्रिमें ६। ५४ बजेतक

संख्या १२]

तृतीया दिनमें ९।१ बजेतक

षष्ठी 🦙 २।४७ बजेतक सप्तमी सायं ४। ५५ बजेतक

नवमी 🦙 ८। ३५ बजेतक

दशमी 🦙 ९। ४९ बजेतक

एकादशी 🗤 १०। ३६ बजेतक ज्येष्ठा सायं ४।४५ बजेतक गुरु

🗤 ५। ४० बजेतक शुक्र मूल

द्वादशी 🔑 १० । ४९ बजेतक त्रयोदशी 🗤 १०। ३३ बजेतक शनि

पू० षा० रात्रिमें ६।५ बजेतक उ० षा० 🗤 ६।० बजेतक

चतुर्दशी ,, ९।४७ बजेतक रिव अमावस्या 🗤 ८। ३६ बजेतक सोम श्रवण सायं ५।३० बजेतक

सं० २०७२, शक १९३७, सन् २०१६, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, माघ शुक्लपक्ष

तिथि वार नक्षत्र प्रतिपदा रात्रिमें ७ । १ बजेतक मिंगल

दिनांक धनिष्ठा सायं ४। ३९ बजेतक

शतभिषा दिनमें ३।२७ बजेतक |१० द्वितीया सायं ५।६ बजेतक बुध तृतीया दिनमें ३। ० बजेतक गुरु पू० भा० '' २।२ बजेतक ११

उ० भा० '' १२।२७ बजेतक चतुर्थी 😗 १२। ४२ बजेतक 🛮 शुक्र १२

पंचमी '' १०। २० बजेतक शनि रिवती '' १०। ४६ बजेतक १३ १४

अश्विनी ''९।७ बजेतक षष्ठी प्रात: ७।५८ बजेतक रिव

सप्तमी रात्रिशेष ५। ४२ बजेतक अष्टमी रात्रिमें ३।३६ बजेतक सोम भणी प्रातः ७। ३३ बजेतक रिप

नवमी 🗤 १ । ४२ बजेतक | मंगल | रोहिणी 😗 ४ । ५८ बजेतक | १६

कृत्तिका रात्रिशेष ६।९ बजेतक दशमी '' १२।८ बजेतक बुध

मृगशिरा रात्रिमें ४।९ बजेतक

चतुर्थी 🦙 १०। ४०बजेतक उ०फा० 🗤 ३। ३२ बजेतक ग्रु २८ ,, पंचमी " १२। ३८ बजेतक हस्त रात्रिशेष ६।६ बजेतक शुक्र २९ " 30 11

सिंहराशि रात्रि ९। ३९ बजेसे, अभिजितका सूर्य रात्रिमें १०। ८ बजे। भद्रा रात्रि ८। २५ बजेसे, गणतन्त्रदिवस, मूल रात्रिमें ११। १२ बजेतक। ¹¹ ११।१२ बजेतक | २६ २७ ,,

१फखरी

२ ,,

३,,

8 "

٤ ,,

ξ,,,

9 ,,

6 11

९फरवरी

,,

,,

,,

,,

चन्द्रदर्शन।

दिनमें ९। ७ बजेतक।

भद्रा दिनमें ९। १ बजेतक, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ८। ४० बजे। कन्याराशि प्रातः ७। ४७ बजेसे।

भद्रा दिनमें २।४७ बजेसे रात्रिमें ३।५१ बजेतक, तुलाराशि रात्रिमें ७। २४ बजेसे। श्रीरामानन्दाचार्य-जयन्ती।

अष्टकाश्राद्ध।

वृश्चिकराशि प्रातः ६।५३ बजेसे। भद्रा दिनमें ९। १२ बजेसे रात्रिमें ९। ४९ बजेतक, मूल दिनमें ३। २० बजेसे।

धनुराशि सायं ४। ४५ बजेसे, षटतिला एकादशीव्रत (सबका)। तिलद्वादशी, मूल सायं ५। ४० बजेतक।

भद्रा रात्रिमें १०। ३३ बजेसे, मकरराशि रात्रिमें १२। ४ बजेसे, शनिप्रदोषव्रत, धनिष्ठाका सूर्य रात्रिमें ४। ४३ बजे।

भद्रा दिनमें १०। १० बजेतक।

कुंभराशि रात्रिशेष ५।५ बजेसे, सोमवती-मौनी अमावस्या, पंचकारम्भ रात्रिशेष ५।५ बजे।

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

भद्रा रात्रिमें १।५२ बजेसे, मीनराशि दिनमें ८।२३ बजेसे। भद्रा दिनमें १२। ४२ बजेतक, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, मूल दिनमें १२। २७ बजेसे। **मेषराशि** दिनमें १०।४६ बजेसे, **पंचक समाप्त** दिनमें १०।४६ बजे,

श्रीवसन्तपंचमी, कुम्भसंक्रान्ति रात्रिमें ६। १९ बजे। भद्रा रात्रिशेष ५।४२ बजेसे, रथसप्तमी, अचला सप्तमी। मूल

भद्रा सायं ४। ३९ बजेतक, वृषराशि दिनमें १। १२ बजेसे।

महानन्दानवमी। मिथुनराशि सायं ४। ३३ बजेसे। भद्रा दिनमें ११। ३२ बजेसे रात्रिमें १०। ५६ बजेतक, जया

एकादशीव्रत (सबका)। कर्कराशि रात्रिमें ९।४० बजेसे, सायन मीनका सूर्य दिन २।५७ बजे। शनिप्रदोषव्रत, शतभिषाका सूर्य दिनमें ८।२० बजे, मूल रात्रिमें ४।६ बजेसे। भद्रा रात्रिमें १०। ७ बजेसे, सिंहराशि रात्रिशेष ५। ३ बजेसे। भद्रा दिनमें १०। ३० बजेतक, माघी पृणिमा, माघ स्नान समाप्त।

१७ ,, एकादशी '' १०। ५६ बजेतक । गुरु आर्द्रा 😗 ३। ४१ बजेतक १८ ,, द्वादशी 😗 १०। १० बजेतक शुक्र 🛭 पुनर्वस् "३।३९ बजेतक १९ ,, त्रयोदशी 🗤 ९। ५३ बजेतक 🛮 शनि पष्य ११४।६ बजेतक २० ,,

चतर्दशी '' १०।७ बजेतक रिव आश्लेषा रात्रिशेष ५ । ३ बजेतक २१ ,, पूर्णिमा १११०। ५४ बजेतक सोम मघा अहोरात्र २२

कल्याण

हस्त

चित्रा

शनि

रवि

सोम

मंगल

बुध

गुरु

शुक्र

शनि

सोम

चतुर्दशी 🦙 ९।३५ बजेतक 🛮 मंगल 🛮 शतभिषा 😗 ११। २९ बजेतक

वार

तृतीया ''१२।४६ बजेतक शुक्र रिवती '' ६।५३ बजेतक

रवि

सप्तमी दिनमें ४।२ बजेतक मंगल रोहिणी '' १२।५६ बजेतक

80

द्वितीया 🦙 १। ४७ बजेतक बिुध

तृतीया ं ३ । ४५ बजेतक ॑ गुरु

चतुर्थी रात्रिशेष ५। ५३ बजेतक शुक्र

पंचमी अहोरात्र

पंचमी दिनमें ८।० बजेतक

षष्ठी 🦙 ९।५५ बजेतक

सप्तमी 🦙 ११। ३३ बजेतक

अष्टमी ᢊ १२ । ४४ बजेतक

नवमी 🦙 १। २७ बजेतक

दशमी 🦙 १। ३७ बजेतक

एकादशी 꺄 १। १७ बजेतक

त्रयोदशी '' ११।१२ बजेतक

तिथि

पंचमी 😗 ८।५ बजेतक

द्वादशी 🔑१२। २७ बजेतक रिव

अमावस्या प्रात: ७। ३७ बजेतक बिध

द्वितीया रात्रिमें ३। १० बजेतक | गुरु

चतुर्थी 😗 १०। २२ बजेतक 🛮 शनि 🖡

षष्ठी सायं ५।५७ बजेतक सोम

अष्टमी ''२। २९ बजेतक बुध

नवमी ''१।१७ बजेतक । गुरु

दशमी 🗤 १२। ३२ बजेतक | शुक्र

एकादशी ''१२। १४ बजेतक । शनि

वार नक्षत्र दिनांक

तिथि

पू० फा० दिनमें ८। २५ बजेतक | २४ 🕠

उ०फा० १११०। ४२ बजेतक २५ 🕠

🗤 १। १३ बजेतक

😗 ३।५१ बजेतक

स्वाती रात्रिमें ६। २४ बजेतक

विशाखा 🕶 ८। ४२ बजेतक

अनुराधा 😗 १०।४० बजेतक

ज्येष्ठा 🗤 १२।१२ बजेतक

मूल 😗 १। १५ बजेतक

पू० षा० 🗤 १।४६ बजेतक

उ० षा० 🗤 १।४८ बजेतक

श्रवण 😗 १।२३ बजेतक

धनिष्ठा 🗤 १२।३६ बजेतक

पू० भा० ११ १० । ६ बजेतक

नक्षत्र

अश्विनी सायं ५ । १३ बजेतक

कृत्तिका '' २। २० बजेतक

मृगशिरा '' १२।३ बजेतक

पुनर्वसु ''११।२१ बजेतक

पुष्य 😗 ११। ४२ बजेतक

आर्द्रा ११ ११ । २८ बजेतक । १७

भरणी दिनमें ३।३७ बजेतक १३

उ० भा० रात्रिमें ८। ३३ बजेतक | १० मार्च

प्रतिपदा रात्रिमें १२। ७ बजेतक मिंगल मिघा प्रात: ६। ३१ बजेतक | २३फरवरी |

सं० २०७२, शक १९३७, सन् २०१६, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, फाल्गुन कृष्णपक्ष

व्रतोत्सव-पर्व

२६ "

२७ ,,

१ मार्च

२ ,,

३ ,,

8 "

4 ,,

ξ,,

9 ,,

दिनांक

११

१२

१४

१५ ,,

१६

१८ ,,

१९ ,,

,,

"

"

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

मूल प्रात: ६। ३१ बजेतक।

कन्याराशि दिनमें ३।० बजेतक। भद्रा दिनमें २। ४६ बजेसे रात्रिमें ३। ४५ बजेतक।

तुलाराशि रात्रिमें २। ३२ बजेसे, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ९। ४ बजे।

सर्वार्थसिद्धियोग दिनमें ३।५१ बजेसे।

२८ " भद्रा दिनमें ९।५५ बजेसे रात्रिमें १०।४५ बजेतक। २९ ,,

> मूल रात्रिमें १०। ४० बजेसे। धनुराशि रात्रिमें १२। १२ बजेसे, श्रीजानकी-जयन्ती।

भद्रा रात्रिमें १। ३३ बजेसे, मूल रात्रिमें १। १५ बजेतक। भद्रा दिनमें १। ३७ बजेतक, पूर्वाभाद्रपदका सूर्य दिनमें १। ५३ बजे।

मकरराशि प्रातः ७। ४५ बजेसे, विजया एकादशीव्रत (सबका)। प्रदोषव्रत।

भद्रा दिनमें ११।१२ बजेसे रात्रिमें १०।२४ बजेतक, महाशिवरात्रिव्रत,

9 ,, कुम्भराशि दिनमें १।० बजे, पंचकारम्भ दिनमें १।० बजे। 6 11 श्राद्धादिकी अमावस्या।

अमावस्या, मीनराशि सायं ४। २६ बजेसे, ग्रस्तोदित खण्ड सूर्यग्रहण।

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

मेषराशि रात्रिमें ६।५३ बजेसे, **पंचक समाप्त** रात्रिमें ६।५३ बजे।

भद्रा दिनमें ११। ३४ बजेसे रात्रिमें १०। २२ बजेतक, वैनायकी

मीन संक्रान्ति दिनमें १।३३ बजे, खरमासारम्भ, वसन्त ऋतु प्रारम्भ।

भद्रा दिनमें ४। २ बजेसे रात्रिमें ३। १६ बजेतक, मिथुनराशि रात्रिमें

कर्कराशि रात्रिशेष ५। २२ बजेसे, उत्तराभाद्रपदका सूर्य रात्रिमें ९। ४५ बजे।

भद्रा दिनमें १२। १४ बजेतक, आमलकी एकादशीव्रत (सबका),

श्रीगणेशचतुर्थीवृत, मूल सायं ५। १३ बजेतक।

प्रतिपदा रात्रिशेष ५। २८ बजेतक सं० २०७२, शक १९३७, सन् २०१६, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-वसन्त-ऋतु, फाल्गुन शुक्लपक्ष

> मुल दिनमें ११। ४२ बजेसे। दिनमें १२। २४ बजे।

बुधाष्टमी।

मुल रात्रिमें ८। ३३ बजेसे।

वृषराशि रात्रिमें ९। १६ बजेसे।

१२। ३० बजेसे, होलाष्टकारम्भ।

भद्रा रात्रिमें १२। २४ बजेसे।

शक सं० १९३८ प्रारम्भ, मूल दिनमें १। ५५ बजेतक।

भद्रा दिनमें २।२९ बजेसे रात्रिमें ३।१९ बजेतक, **कन्याराशि** रात्रिमें ,, १०।१८ बजेसे, **व्रत-पूर्णिमा, होलिकादाह** रात्रिमें ३।१९ बजे भद्राके बाद। पूर्णिमा 😗 ४।८ बजेतक बुध | उ० फा० सायं ५।५७ बजेतक | २३ पूर्णिमा, काशीमें होली, चैतन्य महाप्रभु-जयन्ती।

सिंहराशि दिनमें १२। ३२ बजेसे, प्रदोषव्रत, सायन मेषका सूर्य द्वादशी 😗 १२ । २७ बजेतक| रवि | आश्लेषा 😗 १२ । ३२ बजेतक | २० ,, त्रयोदशी '' १।१५ बजेतक सोम मिघा 💮 '' १।५५ बजेतक २१ " चतुर्दशी 😗 २। २९ बजेतक | मंगल | पू० फा० ग ३ । ४४ बजेतक | २२

संख्या १२] कपानुभूति कृपानुभूति निरक्षर श्रद्धालु भक्तपर श्रीमद्भगवद्गीताकी कृपा (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र') तो उनका जयनाथसिंह था, किंतु सब उन्हें जैनूसिंह 'स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोगः।' (योगदर्शन २।४४) कहते थे। उनके सगे भाई देवनाथसिंह, जिन्हें देऊसिंह अर्थात् स्वाध्यायसे इष्टदेवताका साक्षात्कार होता कहा जाता था, मुझसे सम्भवत: सन् १९३८ ई० में मिले। वे सत्याग्रह आन्दोलनमें तो सम्मिलित नहीं हुए है। यहाँ स्वाध्यायका अर्थ है—मन्त्र-जप, लेकिन एक अच्छे सन्तने अपने सहज ढंगसे स्वाध्यायकी जो थे, किंतु मुझे जानते थे। व्याख्या की, वह भी भूलनेयोग्य नहीं है। वे कहते थे-मैं सन् १९३६ ई० से ही वाराणसीसे दूर हो गया 'स्वाध्यायका अर्थ है 'स्व' अपना + अध्याय अर्थात् था और सन् १९३७ ई० से मेरठसे निकलने वाले वह ग्रन्थ या मन्त्र, जिसे तुमने अपनाया है, वह तुम्हारे मासिक-पत्र 'संकीर्तन' का सम्पादन करने लगा था। अपने जीवनका एक अंग-अध्याय हो जाय।' उस समय मैं मेरठसे अपनी जन्मभूमिके क्षेत्रमें बहुत थोड़े पाठ करनेसे एक विशेष प्रकारकी शक्ति प्राप्त दिनोंको आया था। होती है। जैसे स्नान करनेसे शरीर स्वच्छ होता है और एक दिन देवनाथसिंह आये और मेरे समीप कुछ स्फूर्ति आती है, वैसे ही नित्यपाठ आन्तरिक स्नान है। समयतक बैठे रहे, फिर एकान्त मिलनेपर बोले—'मेरी इससे अन्त:करणकी शुद्धि होती है और मानसिक प्रेरणा इच्छा गीता-पाठ करनेकी होती है। अब इस आयुमें मिलती है साधनके लिये। गाँवके किसी व्यक्तिसे अक्षर पढने बैठनेमें लज्जा आती आप गीता, भागवत या श्रीरामचरितमानसका कोई है। कोई उपाय बतलाइये।' श्लोक अथवा चौपाई कण्ठ कर लें, जो आपको बहुत वे जमींदार थे। उन दिनों सम्पन्न ग्रामीण किसान-साधारण लगे और मन-ही-मन उसे बार-बार दुहराते जमींदार अपने या अपने पुत्रोंके लिये पढ़ना-पढ़ाना रहें। धैर्यपूर्वक दो-चार दिन उसको दुहरायें। ऐसा अनावश्यक मानते थे। कह देते थे—'लड़केको पढ़ाकर करनेसे अचानक किसी समय आपको उसका ऐसा अर्थ क्या करना है। उसे कोई नौकरी करनी है?' सूझेगा, जो स्वयं आपको चिकत कर देगा। यह उसके मैं जानता था कि जयनाथसिंह, जो मेरे कांग्रेस-आन्दोलनके साथी थे, उन्होंने भी कांग्रेस-आन्दोलनमें उस अर्थपर पड़ा आवरण उसके बार-बार पाठ करनेसे आनेके पश्चात् अक्षरज्ञान सीखा और धीरे-धीरे हिन्दीकी दूर हुआ। इसी प्रकार अन्त:करणमें ही स्थित परमात्मतत्त्वपर पुस्तकें पढ़ने लगे थे। उनके भाई देवनाथसिंह भी निरक्षर जो आवरण है, वह पाठ करते रहनेसे दूर होता है या शिथिल पडता है। ही थे। पाठ करना तो फिर भी बड़ी बात है, पाठ करनेका किसी भी आयुमें पढ़ने लगना कोई लज्जाकी बात संकल्प और उसकी चेष्टा भी चमत्कार उत्पन्न करती नहीं है, यह भले सत्य है, किंतु ३०-३५ वर्षके ग्रामीण है, यह मैंने देखा है। युवकको यह तथ्य समझा देना मुझे सरल नहीं लगा और वाराणसी जिलेमें एक गाँव है महुअर। जब देशका जिसे वर्णमालाकी पहचान भी न हो, उसे गीता-पाठ स्वाधीनता आन्दोलन चल रहा था, तब उस गाँवके एक करनेकी भला कौन-सी युक्ति मैं बतला देता। यह तो अब मैं जानता हूँ कि बाबा नन्दजीने भी क्षत्रिय युवक सत्याग्रह आन्दोलनमें मेरे साथी थे। नाम

भाग ८९ अपने लालाको पढ़ाया नहीं, छोटेपनमें ही गोचारणमें यह तथ्य उन्हें मैंने बतलाया तो वे भाव-विह्वल हो गये, उनकी आँखोंसे अश्रु बहने लगे। गद्गद स्वरमें बोले— लगा दिया, किंतु यह नन्हा अनपढ़ गोपाल, जिसे चाहे उसे सहज महापण्डित बना देता है। 'मुझ-जैसे साधारण व्यक्तिपर भगवान्की इतनी कृपा!' उस समय मैंने देऊ (देवनाथसिंह)-को समझा इसके बाद वे मुझे मिले प्रयाग-झुसीमें और दिया—गीता भगवान्की वाणी होनेसे भगवान्का स्वरूप हरिद्वारमें। तब थे तो गृहस्थ-वेशमें ही, किंतु पैदल है, अत: गीताका स्पर्श भी गीता-पाठ जैसा ही है। आप अकेले पूरे भारतकी तीर्थयात्रा कर रहे थे। तीन बार प्रतिदिन गीताकी पुस्तकको प्रणाम कर लिया करें और उन्होंने लगातार यह पैदल तीर्थयात्रा की और चौथी बार ऐसी ही यात्रा करते द्वारका पहुँचे तो श्रीद्वारकाधीशके पंक्तियोंपर अँगुली फिरा लिया करें। उन्होंने मेरी बातपर विश्वास कर लिया। सन्तुष्ट दर्शन करते समय ही मन्दिरमें उनका शरीर छूट गया। होकर चले गये। पीछे कहींसे गीताप्रेस (गोरखपुर)-से यह घटना इतने विस्तारसे देनेका कारण यह है कि छपी गीताके मूल श्लोकोंकी बड़े अक्षरोंकी पुस्तक में इसमें बहुत-कुछ प्रत्यक्ष साक्षी रहा हूँ। सुनी-सुनायी खरीद लाये और नियमसे प्रतिदिन प्रारम्भसे अन्ततक बात नहीं है और पाठ तथा कन्हाईकी कृपाका अच्छा उसकी पंक्तियोंपर अँगुली फिराने लगे। उदाहरण है। अब मुझे स्मरण नहीं है कि वर्ष, डेढ़ वर्ष या दो श्रीमद्भागवतके प्रसिद्ध कथावाचक एवं विद्वान् वर्षमें मैं फिर मेरठसे उधर गया, किंतु मेरे उधर जानेका पण्डित श्रीनाथजी पुराणाचार्य (वृन्दावन) इसे 'ग्रन्थ-किसीसे पता लगा तो देवनाथिसंह फिर मेरे पास आये। कृपा' कहते हैं। उनका कहना है—'गीता, श्रीमद्भागवत, उन्होंने बड़ी नम्रतासे मुझसे कहा—'मैं गीताकी पंक्तियोंपर श्रीरामचरितमानस-जैसे ग्रन्थ मन्त्रात्मक हैं और चेतन अँगुली फिराता हूँ तो मेरे मुखसे कुछ निकलता है। मैं हैं। इनका श्रद्धापूर्वक आश्रय लिया जाय तो पाठ क्या बोलने लगता हूँ, मुझे पता नहीं है। आप थोड़ी देर करनेवालेपर ये कृपा करते हैं। एकान्तमें चलकर इसे देख लीजिये।' वृन्दावनमें अनाज मण्डीमें लगभग सन् ३७-३८ में मैं उनको लेकर एकान्तमें गया। उन्होंने अपनी एक अत्यन्त वृद्ध महात्माके दर्शन किये थे। उनका नाम पुस्तक खोली, जो वह साथ लाये थे। मेरे आश्चर्यका श्रीअवधदासजी था। वे श्रीमद्भागवतको ही आराध्य ठिकाना नहीं रहा, जब मैंने देखा कि वे जिन पंक्तियोंपर मानते थे और सदा भागवतका मासिक क्रमसे पाठ करते अँगुली फेरते हैं, उनका शुद्ध उच्चारण उनके मुखसे थे। वृद्धावस्थामें दृष्टिलोप हो जानेपर भी आसनपर बैठकर ग्रन्थ सामने रखकर पाठ करते थे। ग्रन्थ तो उन्हें होता है। मैंने उन्हें गीताकी दूसरी पुस्तक तो नहीं दी। कण्ठस्थ था और उसी अनुमानसे पन्ने उलटते जाते थे। मुझे आवश्यकता नहीं लगी और न वहाँ मेरे पास दूसरी कहनेका तात्पर्य है कि आप अपने आराध्य-इष्टके मोटे या मझोले टाइपकी कोई प्रति थी, किंतु उस चरित, गुण आदि जिसमें हों उस ग्रन्थको निष्ठापूर्वक प्रतिको बीच-बीचमेंसे खोलकर कई स्थानोंपर उनसे अपनाकर उसका नित्य पाठ करेंगे तो आपपर ग्रन्थ-कृपा अँगुली फिरवाकर देख लिया कि वे जिस पंक्तिपर भी होगी और आपमें इष्टके प्रति भक्तिका जागरण भी अँगुली फिराते थे, उसका उनके मुखसे शुद्ध उच्चारण होगा। होतीndulsm Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH ऐकिए श्रीपादणी अगुजानी संख्या १२] पढो, समझो और करो पढ़ो, समझो और करो (१) छुपकर बैठ गया। अब तो सब दर्शकोंको यह देखकर निरपराध प्राणीको सतानेका फल बड़ी प्रसन्नता हुई, सबने उस ईश्वरको बड़ा धन्यवाद दिया घटना लगभग ५५ वर्ष पुरानी है, पर है सत्य। यह और कहा कि चलो, इस बेचारे खरगोशके भगवान्ने प्राण घटना खास मेरठकी है। मेरठ जंक्शनसे शहरको जो सडक बचा दिये। आज यदि यह यहाँपर घास न होती तो बेचारा जाती है, उसी सड़कपर एक मिलिट्रीका फार्म है। एक खरगोश कभी नहीं बचता, मारा जाता। भगवान्ने पहले ही इसे बचानेके लिये यहाँपर घासका ढेर लगवा दिया दिनकी बात है, कुछ दूरीपर कुछ महिलाएँ बैठी हुई अपनी खुरपीसे घास खोद रही थीं। उन्होंने घास खोद-खोदकर था। जिसके भगवान् रक्षक हैं, भला उसे कौन मारनेवाला है ? खरगोशको और अन्य दर्शकोंको यह कहाँ पता था ढेर लगा रखा था। अकस्मात् जंगलसे उस ओर एक खरगोश भागता हुआ आ गया। उधर ही दो कुत्ते भी कि यह एक बार तो कालके मुँहमेंसे साफ बच गया है, पर संयोगसे आ निकले। कुत्तोंकी जो दृष्टि खरगोशकी ओर अभी दूसरी बार फिर कालके मुँहमें जाना बाकी है और गयी तो फिर क्या था, कुत्ते उस खरगोशको खानेके लिये भगवान्को इसे पुनः साफ बचाकर अपनी दूसरी अद्भुत लीला और चमत्कार दिखाना बाकी है। पकड़ने दौड़ पड़े और उस खरगोशके पीछे हो लिये। जिधरको भी वह खरगोश जाता, वे भी उसके पीछे दौड़ने बात यह हुई कि भगवान्की अद्भुत महिमाकी जब लगते, बेचारा खरगोश अब तो बड़ा परेशान हुआ और ये बातें दर्शकोंके मुखसे पासमें खड़े हुए एक घोर उद्दण्ड कभी तो अपने प्राण बचाता हुआ इधरको भागे और कभी नास्तिकने सुनीं, जो ईश्वरको नहीं मानता था तो उसे यह अपने प्राण बचाता हुआ उधरको भागे, पर कृत्ते उसके बातें सहन नहीं हुईं और उसका पारा चढ़ गया। वह बड़ा पीछे लगे रहे और उन्होंने खरगोशका पीछा करना नहीं चिढ़ा और बड़ी जोरसे ईश्वरका मजाक उड़ाते हुए और छोड़ा। इस दूश्यको देखनेके लिये इधर-उधरके कितने ही ठट्ठा मारकर हँसते हुए आगे बढ़ा। उसने घासके ढेरमें मनुष्य वहाँपर इकट्ने हो गये, पर किसीने भी उस बेचारे अपना हाथ घुसेडकर उस खरगोशको पकड लिया। अब खरगोशके प्राण बचानेकी तनिक भी चेष्टा नहीं की और क्या था ? अब तो खरगोश बड़ा छटपटाया। उसने उसके कुत्तोंको नहीं भगाया और न ही मारा; बल्कि उलटे खड़े-दोनों कान अपने एक हाथसे पकड़कर उसे अधरमें लटकाते खडे देखते रहे और उसे एक अच्छा खासा तमाशा समझकर हुए अपने दूसरे हाथसे किरपाण निकालते हुए कहा कि तुम लोग कहते हो कि इस खरगोशको भगवान्ने बचा इसे देखते रहे और इसमें बडी दिलचस्पी लेते रहे कि देखें, अब क्या होता है ? किस प्रकार कुत्ते इसे पकड़कर दबोचते लिया। यह बात तुम्हारी बिलकुल गलत है, इसमें भगवानुके हैं और कैसे खाते हैं ? अब उस बेचारे खरगोशका एकमात्र बचानेकी क्या बात थी? यह तो इस समय इत्तफाकसे उस भगवान्के अतिरिक्त और कौन रक्षक था, कौन अपना घासके ढेरमें घुस गया। इसलिये यह कुत्तोंद्वारा मरनेसे बच था, जो उसकी रक्षा करता और उसके प्राण बचाता ? जब गया। अब लो, मैं इस खरगोशकी इस अपनी किरपाणसे उस खरगोशने देखा कि मुझे अब कुत्तोंने चारों ओरसे घेर गरदन काटकर मारता हूँ और— लिया है और जंगलमें भागनेके लिये अब कोई रास्ता नहीं 'हुण असि देखेंगे इसदे भगवान नु कैसे बचाता है?' है, अब प्राण नहीं बचेंगे तो वह बेचारा एकदम झटसे देखेंगे कि तुम्हारा भगवान् अब इसे मरनेसे कैसे छलाँग मारकर और दौडकर उन महिलाओंने जो घासका बचाता है और अब इस खरगोशकी तुम्हारा भगवान् ढेर लगा रखा था, उस घासके ढेरमें घुस गया और चुपचाप कैसे रक्षा करता है? भगवानुको खुले रूपमें दी गयी

भाग ८९ झड़ गयी और अक्ल ठिकाने आ गयी। जो एक महान् उस नास्तिककी चुनौतीको सबने सुना और सुनकर सबके चेहरे एकदम फीके पड़ गये और अब तो सब बड़े विपत्तिग्रस्त निरपराध खरगोशकी रक्षा करनेके बदले उसके ही घबड़ाये और टकटकी लगाये इस अद्भुत दृश्यको प्राण लेनेपर उतारू हो गया था और बडे गर्वके साथ उस जगन्नियन्ताको चुनौती दे रहा था, वह जालिम देखने लगे कि अब क्या होता है ? अब तो यह किसीको भी यह विश्वास नहीं था कि अब इस खरगोशकी किसी खरगोशका बाल भी बाँका नहीं कर सका और उलटा प्रकार रक्षा हो सकेगी और इस जालिमके हाथोंसे इस अपना हाथ अपनी ही किरपाणसे स्वयं अपने हाथसे बेचारेके प्राण बच सकेंगे; वह जालिम साक्षात् काल काटकर सदा-सर्वदाके लिये टोंटा बन बैठा, अपनी करनीका बनकर उनके सामने खड़ा था और सब मुर्देकी तरह और निरपराध प्राणीको सतानेका प्रत्यक्ष फल सदाके लिये एकटक इस दृश्यको देख रहे थे और किसीमें भी ऐसा भुगत बैठा। इसे कहते हैं ईश्वरीय लीलाका अद्भुत चमत्कार! साहस नहीं था कि जो ईश्वरको भी चुनौती देनेवाले कौन कहता है कि ईश्वर नहीं है और ईश्वर इस नास्तिक जालिमको ललकारता और इस नास्तिकके जिसको बचाना चाहे, उसे कौन मार सकता है ? आखिर सामने आने और उसकी रक्षा करनेका साहस करता? 'अनाथके नाथ' और 'निर्बलके बल' तो वे ही हैं। अब तो बस चारों ओर निराशा-ही-निराशा थी। ठीक भक्त रामशरणदास उसी समय जबिक वह जालिम अपने एक हाथमें खरगोशके (२) कान पकड़कर उसे अधरमें लटकाये हुए था और खरगोश श्रीमद्भगवद्गीता-श्रवणका अद्भुत चमत्कार बड़ा भयभीत एवं छटपटा रहा था, उधर वह नास्तिक अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते। अपने दूसरे हाथमें किरपाण लिये उसकी गरदनपर वार तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥ करके उसके प्राण लेना चाहता था, तभी ईश्वरीय लीलाने (गीता ९।२२) अपना वह अद्भुत चमत्कार दिखाया कि जिसे देखकर यह प्रसंग लगभग २५ वर्ष पुराना है। सन् सब आश्चर्यचिकत रह गये और दाँतों तले अँगुली दबा १९८९ ई० में मेरी बहनका विवाह हुआ था। प्रात: लिये। चारों ओर 'जय हो-जय हो', 'धन्य-धन्य', बारातियोंकी विदाईकी तैयारी हो रही थी। तभी अचानक 'वाह-वाह' की ध्विन गूँज उठी। बात यह हुई कि उस मेरी माताजीको बेहोशी आ गयी, सभी लोगोंके प्रयाससे नास्तिक उद्दण्डने ज्यों ही यह कहकर कि 'हुण असि लगभग आधे घण्टेमें होश आ गया। सभी लोग अपने-देखेंगे इसदे भगवान नु कैसे बचाता है' चमचमाती अपने गन्तव्यको चले गये। किरपाण हाथमें लेकर खरगोशकी गरदन काटनेको चलायी लेकिन इसके बाद भी महीना-दो महीनापर बेहोशी आ जाती थी। अत: इलाज करवाना आवश्यक था। तो वह किरपाण उस खरगोशकी गरदनकी ओर तनिक फलत: आर्थिक तंगीके बावजूद इलाज करवानेहेतु राँची भी न जाकर सीधे ऊपरकी ओर गयी और जिस हाथसे वह खरगोशके कान पकड उसे अधरमें लटकाये हुए (झारखण्ड) डॉ॰ पी॰ आर॰ प्रसादके पास ले गया। देखकर उन्होंने रोगको हृदयरोग कहा और दवाइयाँ था, ठीक उसी हाथपर जाकर लगी और हाथको पहुँचेतक चीर डाला—फाड डाला, बडे जोरसे खुनके फव्वारे छूटने लिखीं। दवाइयोंका दाम पूछनेपर दुकानवालेने ६०० या लगे। वह खरगोश तो साफ छूटकर जंगलकी ओर भाग ७०० रुपये बताया, जो आजीवन चलना था। गया और वह व्यक्ति एकदमसे बेहोश होकर धडामसे मैंने रुपयोंके अभावमें दवाई नहीं खरीदी और माँसे पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसे चारपाईपर डालकर अस्पताल कहा कि प्रत्येक माह इतनी महँगी दवा चलाना पहुँचाया गया। होश आते ही उसकी सारी नास्तिकता पिताजीकी आमदनीसे बहुत मुश्किल है। उस समय

संख्या १२] पढ़ो, समझ	ो और करो ४५

पिताजीको गाँवके डाकघरमें कार्य करनेके एवजमें मात्र	लपलपाती लपटोंने घरको अपने उदरमें समेट लिया। उस
एक हजार रुपये मासिक भत्ता मिलता था, जिसमें	बन्धुके दो मासूम मुन्ने घरमें ही रह गये थे। भारी-
परिवारका खर्च और दवाईका खर्च—ये दोनों वहन	भरकम धुआँ और लपलपाती लपटें! माता-पिता हक्के-
करना सम्भव नहीं था। इसलिये मैंने माँसे कहा कि अब	बक्के बन बालकोंकी रक्षाके लिये करुण गुहार कर रहे
भगवान्का नाम लेकर घर चलो।	थे—हाय-हाय करते हुए अश्रु बहा रहे थे। पर जीवन-
तत्पश्चात् दो-तीन दिनके बाद मेरे दिमागमें एक	मोह उन्हें मकानमें जानेसे रोके खड़ा था। इसी क्षण
बात आयी कि गीता सुननेसे मोक्ष (मुक्त) होता है तो	जीवनकी बाजी लगा, परोपकारी पड़ोसी कृष्णन् मकानमें
क्यों नहीं माँको गीता सुना दें, या तो रोगसे मुक्त होगी	घुसे और बालकोंको वे सुरक्षित बाहर निकाल लाये, पर
या नहीं तो जीवनसे। यह सोचकर उस दिनसे प्रत्येक	वे स्वयं आगसे बुरी तरह झुलस गये—और-तो-और
दिन सायंकालमें घरके अन्य सदस्योंके साथ माँको गीता	अपने पीछे वृद्धा माँ, पत्नी और दो अबोध बच्चोंको
सुनाना प्रारम्भ किया। उस गीता-श्रवणके प्रभावसे	छोड़ वे इस संसारसे चल बसे!
भगवान्की कृपासे अभीतक (७५ वर्षकी उम्र है)	परमार्थमें प्राण-विसर्जन करनेवाले इस महान् आत्माके
बेहोशी नहीं आयी। माँ स्वस्थ हैं।	निराश्रित परिवारके लिये कालीकटके एक प्रमुख पत्रने
अत: मेरा विश्वास है कि श्रीमद्भगवद्गीतामें कही	सहायताकी अपील जारी की और देखते-देखते बीस
गयी बात—जो लोग अनन्य भावसे मेरी उपासना करते	हजार रुपयेकी राशि एकत्रित हो गयी।
हैं, उनका कल्याण और उनकी रक्षा मैं करता हूँ,	पत्रके संचालक जब यह धनराशि कृष्णन्की
बिलकुल सत्य एवं सार्थक है।—सत्येन्द्र मिश्र	विधवाको भेंट करने उनके घर पहुँचे तो उस विधवा
(ξ)	पत्नीने विनम्रतापूर्वक उक्त राशि ग्रहण करनेसे इनकार
हनुमानचालीसापाठसे दुःस्वप्ननाश	करते हुए टूटे तन और थके मनसे मात्र इतना ही कहा—
ग्रह-नक्षत्र तभीतक अधिक दु:खदायी होते हैं, जबतक	'वे इतने ही दिनोंके लिये आये थे और मानवीय
व्यक्ति भगवान्की शक्ति और दयाका आश्रय नहीं समझता।	कर्तव्य पूराकर चल दियेएक दिन हमें भी वहाँ
भगवत्कृपामें वह शक्ति है, जो असम्भवको सम्भव कर	जाना है; यदि मैं उनके कर्तव्यको इन रंगीन नोटोंके
देती है; अनिष्टका विनाश करती है। भगवदाश्रयके	बदले बेच दूँ तो बताइये वहाँ क्या जवाब दूँगी—क्या
चमत्कारकी बात लिखता हूँ। मुझे रात्रिमें भयानक सपने	जवाब दूँगी'''''।' कहते-कहते उनकी आँखें भर
आते थे। वे कुछ क्षणके होते, लेकिन लम्बे प्रतीत होते। मैं	आयीं और आँचलसे आँखें पोंछती रूँधे गलेसे वह
घबरा जाता था। नींदका झोंका आनेपर भी सोनेका मन	इतना ही कह पायी—'पुण्यसे हमें हाथ-पैर मिले हैं।
नहीं होता; क्योंकि निद्रामें सामर्थ्य अपने हाथमें नहीं होता।	रामका सम्बल थामे हम अपना जीवन जी
मैंने रामजीका ध्यान करके रोकर करुणापूर्ण हृदयसे प्रार्थना	लेंगेपड़ोसी-परिवारका आशियाना अग्निसात् हो
की और हनुमानचालीसाका पाठ किया। मुझे उसी रातसे	गया। इस परिवारके लिये धरती ही बिस्तर एवं
सपने आने बन्द हो गये।—श्रीकृष्ण अग्रवाल	आसमान साया रह गया है। अतः मेरा आपसे यही
(8)	निवेदन है कि यह धनराशि इस बेसाया परिवारको
अद्भुत सामाजिक सद्भाव	मकान बनवानेके लिये दे दी जाय।
घटना लगभग तीस वर्ष पहलेकी है। केरलके एक	वह बीस हजारकी धनराशि उस मुसलिम परिवारको
मुसलिम भाईके घरमें आग लगी। देखते-देखते उसकी	घर बनानेके लिये दे दी गयी।
──	>+

मनन करने योग्य स्वामिभक्ति धन्य है

महाराणा संग्रामसिंह स्वर्ग पधारे। मेवाड्के सिंहासनके हृदयपर पत्थर रखकर पन्नाने अपने बच्चेकी ओर

योग्य उनका ज्येष्ठ पुत्र विक्रमादित्य सिद्ध नहीं हुआ। राजपृत सरदारोंने उसे शीघ्र सिंहासनसे उतार दिया। छोटे कुमार उदयसिंह अभी शिशु थे। उनका राज्याभिषेक तो हो गया; किंतु दासीपुत्र बनवीरको उनका संरक्षक बनाया

गया। बालक राणा उदयसिंहकी ओरसे बनवीर राज्य-संचालन करने लगा।

बनवीरके मनमें राज्यका लोभ आया। एक रात्रिको वह स्वयं नंगी तलवार लेकर उठा और राजभवनमें

नि:शंक सोते राजकुमार विक्रमादित्यकी उसने हत्या कर दी। उसका यह क्रूर कर्म राजभवनमें दोने-पत्तल उठानेका काम करनेवाला सेवक देख रहा था। वह दौडा हुआ राणा उदयसिंहकी धाय पन्नाके पास गया। उसने

बतलाया—'बनवीर इसी ओर आ रहा है।' पन्नाके एक पुत्र था चन्दन, किंतु स्वर्गीया रानी करुणावती और राणा साँगाके कनिष्ठ पुत्र उदयसिंहका भी लालन-पालन वही कर रही थी। चन्दन और

राज्यसे पृथक् कर देनेपर उदयसिंह बनवीर दासीपुत्रकी संरक्षामें उत्तराधिकारी घोषित हुए थे। बनवीर मेवाड़पर निष्कण्टक राज्य करना चाहता था।

उदयसिंह उसके दो नेत्र थे। अयोग्य विक्रमादित्यके

पन्ना धायने दो क्षणमें कर्तव्य निश्चित कर लिया। उसने सोते हुए उदयसिंहके वस्त्र उतार लिये और उन्हें एक टोकरीमें लिटाकर ऊपरसे दोने-पत्तलसे ढक दिया।

वह टोकरी उस सेवकको देकर कह दिया—'चुप-चाप

राजभवनसे बाहर निकल जाओ। नगरके बाहर नदीके पास मेरी प्रतीक्षा करना।'

निद्रित उदयको उसी प्रकार टोकरेमें पत्तलोंके नीचे छिपाकर बारी बाहर निकल गया। पन्नाका हृदय जोरोंसे धडक रहा था। पर वह मौन तथा शान्त थी।

अपने पुत्र चन्दनको उस स्वामिभक्ता धायने उदयसिंहके कपड़े पहिनाकर उनके पलंगपर सुला दिया।

संकेत कर दिया। एक ही झटकेमें उस बालकका मस्तक

बनवीरने शरीरसे पृथक् कर दिया। वह शीघ्रतासे वहाँसे चल दिया। पन्ना अपने पुत्रका शव लिये नदी-किनारे पहुँची। आज वह खुलकर रो भी नहीं सकती थी। पुत्रका शरीर नदीमें विसर्जित करके वह उदयसिंहको

'अपने राजाकी रक्षा करो।' सर्वत्र निराश होकर पन्ना देयराके शासक आशाशाहके पास पहुँची और उदयको उनकी गोदमें डाल दिया।

लेकर वहाँसे चली गयी।

समय आया जब कि बड़े होकर उदयसिंहने बनवीरको उसके कर्मका दण्ड दिया और मेवाडके सिंहासनको भूषित किया। पन्ना धायके अपूर्व त्यागने ही राणांके कुलकी रक्षा की। धन्य है ऐसी स्वामिभक्ति!

इतिहास साक्षी है, बनवीरके कुकर्मोंका उसे भरपूर

फल मिला। उदयसिंह मेवाड़के सिंहासनपर आरूढ़ हुए।

वीर उदयसिंहने मातृ-तुल्य पन्नाके चरण-स्पर्श किये। पन्ना महान् थी-इसे प्रत्येक इतिहासकार सादर

इतनेमें ही रक्तसे सनी तलवार लिये बनवीर आ पहुँचा। उमाने पुरुष्ट<mark>िक के अ</mark>है है है है है उस https://dsc.gg/dhaिलीब्रिते | हैं MADE WITH LOVE BY Avinash/Sha

(भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और सदाचार-सम्बन्धी सचित्र मासिक पत्र)

'कल्याण'

-के ८९वें वर्ष (वि०सं० २०७१-७२, सन् २०१५ ई०)-के दूसरे अङ्कसे बारहवें अङ्कतकके

निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक विषय-सूची (विशेषाङ्ककी विषय-सूची उसके आरम्भमें देखनी चाहिये, वह इसमें सम्मिलित नहीं है।)

निबन्ध-सूची

विषय

विषय	पृष्ठ-संख्या
१- अछत	
	— श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०१२-पृ०३४
	मशक्तिसे लाभ
-	त श्रीलालजी रामजी शुक्ल, एम० ए०) सं०८-पृ०३३
	में निवास (श्रीब्रजमोहनजी मिहिर)सं०९-पृ०११
	ताकी महत्ता (नित्यलीलालीन श्रद्धेय
	श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०१२-पृ०१२
	ाति सो गति (श्रीइन्द्रमलजी राठी)सं०३-पृ०२४
	साधनके अनुकूल संग करे (नित्यलीलालीन श्रद्धेय
	श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०१०-पृ०१४
	है विषादकी जननी (डॉ० श्रीशैलजाजी) सं०३-पृ०१९
८- अभिश	ाप नहीं है प्रतिकूलता
(श्रीता	राचन्दजी आहूजा) सं०५-पृ०२०
९- अशुद्ध	कमाई तथा शुद्ध कमाईके धनका प्रभाव
(श्रीशि	वकुमारजी गोयल) सं०५-पृ०१२
०- आगेर्क	ो सुध ले (श्रीअवनीन्द्रजी नागर)सं०१०-पृ०१६
१- आचार्य	श्री सत्य कहते थे [लघुकथा]
(श्रीसु१	गषजी खन्ना)
२- आत्मी	यता [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टाटिया)
	— श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०११-पृ०३३
•	त्मिक विजय और शान्ति
	निकशोरजी सिंह 'विरागी') सं०८-पृ०४१
	त्मिक शान्ति प्राप्त करनेका अचूक साधन
	नीन वीतराग स्वामी श्रीदयानन्दिगिरिजी महाराज)
	:—श्रीज्ञानचन्दजी गर्ग]सं०१०-पृ०२३
५- आपके	समस्त कार्य भगवान् कर देंगे कमचन्दजी प्रजापति)सं०१२-पृ०२३
	चित्र-परिचयसं०२-पृ०२५, सं०३-पृ०३७,
	पृ०४२, सं०५-पृ०१७, सं०६-पृ०२४, सं०८-पृ०२४, सं०९-
	, सं०१०-पृ०६, सं०११-पृ०६, सं०१२-पृ०६
	कता सदाचारकी जननी है
	श्रीविद्याभास्करजी वाजपेयी) सं०६-पृ०३५
८- ईश्वर	
(ब्रह्मर	नीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०८-पृ०६

(डॉ० श्रीशिवेन्द्रप्रसादजी गर्ग, 'सुमन') सं०४-पृ०१६

(सर्वोदय विचार परिषद्) सं०९-पृ०४१

१९- उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्

२०- ऊर्जाका अक्षय स्रोत-गोबर गैस

पृष्ठ-संख्या २१- एक पलके सत्संगसे प्रभुप्राप्ति (डॉ० श्रीभीकमचन्दजी प्रजापति)..... सं०४-पृ०३२

२२- एकान्त कहीं नहीं सं०११-पृ०९ २३- कर्मभोग एवं कर्मप्रायश्चित्त

(श्रीसुदर्शनसिंहजी 'श्रीचक्र') सं०६-पृ०४१ २४- कलियुगी जीवोंके परम कल्याणका साधन क्या है? (श्रीबरजोरसिंहजी).....सं०६-प०२५

२५- कल्याण— सं०२-पृ०५, सं०३-पृ०५, सं०४-पृ०५, सं०५-पु०५, सं०६-पु०५, सं०७-पु०५, सं०८-पु०५, सं०९-पु०५, सं०१०-

पृ०५, सं०११-पृ०५, सं०१२-पृ०५ २६- 'कल्याण' का आगामी ९०वें वर्ष (सन् २०१६ ई०)-का

विशेषाङ्क 'गंगा-अङ्क'..... सं०५-पृ०४७ २७- कहो मारुति! गिद्धराज कैसे हैं? [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग]

(आचार्य श्रीरामरंगजी) सं०१२-प०३३ २८- कृपानुभृति सं०३-पृ०४४, सं०४-पृ०४४, सं०५-पृ०४२,

सं०६-पु०४६, सं०७-पु०४६, सं०८-पु०४६, सं०९-पु०४६, सं०१०-पु०४६, सं०११-पु०४१, सं०१२-पु०४१

२९- कैसे लायें जीवनमें खुशियाँ? (डॉ० श्रीशैलजाजी आहूजा)सं०१२-पृ०२७ ३०- कोई वस्तु व्यर्थ मत फेंको सं०१०-पृ०२९

३१- कोखकी कीमत [बोधकथा] (श्रीशंकरलालजी माहेश्वरी)......सं०५-पृ०२२

३२- गाढ़ी कमाई (श्रीकेशवनारायणजी अग्रवाल) सं०७-पृ०१४ ३३- गायोंकी चोरी रोकना आवश्यक

(श्रीमुलखराजजी विरमानी)......सं०१२-पृ०२९ ३४- गिरिराज गोवर्धन [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी) सं०८-पृ०२९

३५- गोपी-प्रेम (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी

श्रीशरणानन्दजी महाराज)......सं०१२-पृ०३६ ३६ - गोबरमें भगवती लक्ष्मीका निवास सं०९ - पृ०४१

३७- गोवंशका विनाश—देशकी अर्थव्यवस्थापर कुठाराघात (श्रीसुभाषजी पटेल) सं०६-पृ०३९

३८- गोशालाओंकी सुरक्षा [सम्पादक]......सं०३-पृ०५० ३९- गोसेवाकी प्रेरणा

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) .. सं०३-पृ०६ ४०- छोटा-बडा कौन है? (महात्मा पं० श्रीशम्भुदयालजी शर्मा)...... सं०७-पृ०९ [88]

पृष्ठ-संख्या

विषय विषय पृष्ठ-संख्या ४१ - जड़ी-बूटियोंकी शिरोमणि—तुलसी ६९- परिहत सरिस धर्म निहं भाई (श्रीसुरेन्द्रकुमारजी 'शिष्य' (श्रीराजीवकुमारजी वैद) सं०१२-पृ०३२ एम० ए०, एम० एड०, साहित्यरत्न) सं०२-पृ०१९ ४२- जीवनकी उपलब्धि [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) ७०- पारिवारिक जीवनकी दृढ़ भित्तियाँ—प्रेम, सहिष्णुता और [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०५-पृ०३३ सेवा (श्रीअगरचन्दजी नाहटा)..... सं०२-पृ०४० ४३ - जीवनमें सफलताके सूत्र (श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी) सं०३ - पृ०२५ ७१ - पिताका कर्ज [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) ४४- ज्योति निष्कम्प है [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग—] [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०१०-पृ०३८ (आचार्य श्रीरामरंगजी) सं०६-पृ०३१ ७२- पितृ-ऋण [लघुकथा] (श्रीअरविन्दजी मिश्र)..... सं०९-पृ०२३ ४५- तुलसीका लोकजागरण (श्रीरामचाकरजी) सं०८-पृ०२४ ७३- पूर्ण गोहत्या-बन्दीकी दिशामें महाराष्ट्रका एक कदम (-राधेश्याम खेमका) सं०४-पृ०५० ४६- तुलसीके हनुमान् ७४- पं० रामाधार मिश्र—एक विलक्षण सन्त [सन्तचरित] (डॉ० श्रीआद्याप्रसादसिंहजी 'प्रदीप') सं०११-पृ०२५ ४७- तुलसी-साहित्यमें विवाह-संस्कारकी वृहद् व्याख्या (डॉ० श्रीरामशंकरजी द्विवेदी, एम०ए०, पी-एच०डी०)......सं०११-पृ०२९ (डॉ॰ नीतू सिंह) सं०९-पृ०२४ ७५- प्रतिग्रह और पापसे भी ऋण अधिक हानिकर है ४८- तेजीसे विलुप्त होती देशी गाय (श्रीमनोजजी भार्गव)..... सं०८-पृ०४२ (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) .. सं०१०-पृ०७ ४९- दरिद्र और श्रीमान् (बहन श्रीजयदेवीजी) सं०६-पृ०१० ७६ - प्रतिशोधकी भावनाका त्याग करके प्रेम कीजिये ५०- 'दानी कहुँ संकर-सम नाहीं' (श्रीमोहनलालजी चौबे, (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)......सं०८-पृ०१४ एम०ए०, बी०एड०, साहित्यरत्न) सं०६-पृ०३७ ५१- दु:खकी निवृत्तिका उपाय ७७- प्रभु श्रीरामके कतिपय श्रेष्ठ सेवक (डॉ० श्रीअजितकुमार सिंहजी) सं०१०-पृ०३० (स्वामी श्रीचिदानन्दजी सरस्वती)......सं०११-पृ०१४ ५२- दूसरेको हानि पहुँचानेका मुझे क्या अधिकार है? ७८- 'प्रिय लागे मोहि ब्रज की बीथिन' ... [प्रेरक प्रसंग] (श्रीजयदेवप्रसादजी बंसल)....... सं०८-पृ०२८ (श्रीअर्जुनलालजी बन्सल) सं०३-पृ०२८ ५३- दूसरोंकी निन्दा किसी हालतमें न करो सं०४-पृ०१८ ७९- प्रेमकी विलक्षण एकता (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०१२-पृ०७ ५४- द्रष्टा बनिये (सुश्री कृष्णा कुमारीजी) सं०७-पृ०३६ ५५- धनकी अन्धपूजा (श्रीरमणलाल बसंतलाल देसाई) सं०११-पृ०२० ८०- प्रेमभक्तिमें भगवान् और भक्तका सम्बन्ध (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)...... सं०७-पृ०११ ५६- धरतीका अमृत—गायका दुध (श्रीबरजोरसिंहजी).....सं०११-पृ०३४ ८१ - बलजी-भूरजी [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) ५७- धरतीकी लाड़िलीका लाड़ला [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०६-पृ०३४ (आचार्य श्रीरामरंगजी) सं०१०-पृ०३४ ८२- बागकी रक्षाका अधिकार है, फल खानेका नहीं सं०७-पृ०२५ ५८- धर्मानुष्ठानोंमें श्राद्ध, पिण्डदान और गया ८३- 'बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा' (डॉ० श्रीराकेशकुमारजी सिन्हा 'रवि', एम० ए०, (श्रीअमृतलालजी गुप्ता) सं०१२-पृ०२५ पी-एच० डी०, डी० लिट०) सं०९-पृ०३० ८४- ब्रह्म और देवताओंका अभिमान (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् ५९- नसीबकी चाभी कर्मके हाथ स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)......सं०११-पृ०१० (डॉ॰ गो॰ दा॰ फेगडे).....सं॰७-पृ०३१ ८५- ब्रह्मसूत्रके अणुभाष्यमें भगवत्सेवाका स्वरूप ६०- निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक (शुद्धाद्वैत पुष्टिभक्तिमार्गीय वैष्णवाचार्य गोस्वामी विषय-सूची..... सं०१२-पृ०४७ श्रीशरद्कुमारजी महाराज) सं०२-पृ०३० ६१ - निम्बार्क-सम्प्रदायकी सेवा-भक्ति ८६ - भक्त किशनसिंहजी [भक्तगाथा] (पं० श्रीरामस्वरूपजी गौड़ 'निम्बार्कभूषण') सं०३-पृ०३३ (पं० श्रीहरद्वारीलालजी शर्मा 'हिन्दीप्रभाकर') सं०९-पृ०१८ ६२- नि:स्वार्थ सेवा—सर्वोत्कृष्ट उपासना ८७- भगवत्कथासे प्रेतोद्धार (प्रो० श्रीराधेमोहनप्रसादजी)......सं०२-पृ०१७ (श्रीरामकेदारजी शर्मा)सं०१२-पृ०१९ ६३- नीति-विभूषण (श्रीसुभाषचन्द्रजी बग्गा) सं०११-पृ०२१ ८८- भगवान्के विशुद्ध प्रेमका उपाय (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय ६४- पढना और है, गुनना और! (श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) .. सं०५-पृ०२९ श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०६-पु०६, सं०७-पु०६ ६५- पढ़ो, समझो और करो सं०३-पृ०४५, सं०४-पृ०४५, सं०५-८९- भगवान्में मन कैसे लगे? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय पु०४३, सं०६-पु०४७, सं०७-पु०४७, सं०८-पु०४७, सं०९-पु०४७, भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोदार) सं०३-पृ०१५ ९०- भगवान् श्रीरामके राज्यकालमें अयोध्याका वैभव सं०१०-पु०४७, सं०११-पु०४२, सं०१२-पु०४३ ६६- पतनोन्मुख मानव-समाजकी रक्षा कैसे हो? (नित्यलीलालीन (श्रीअर्जुनलालजी बंसल)...... सं०१०-पृ०२१ श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)..... सं०४-पृ०१२ ९१- भगवान्से नाता जोड़नेका महत्त्व ६७- परमभागवत परीक्षित् (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् (दिव्यज्योति पूज्या देवकी माताजी) स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)......सं०१०-पृ०१० [प्रेषक—श्रीअरविन्द शारदाजी] सं०१२-पृ०३० ९२- भजन क्यों नहीं होता? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी ६८- परम सेवा (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) .. सं०२-पृ०६ श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)..... सं०५-पृ०१३

[88] पृष्ठ-संख्या

विषय

विषय

पृष्ठ-संख्या

[प्रेषिका—सुश्री कविता डालमिया]......सं०९-पृ०१४

९३- भाग्यका मारा [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया)	- पृ०४५, [भाद्रपदमासके व्रत-पर्व]-सं०८-पृ०४५, [आश्विनमासके
[प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०८-पृ०३८	त्रत-पर्व]-सं०९-पृ०४५, [कार्तिकमासके व्रत-पर्व]-सं०१०-पृ०४५,
्रिपका—त्रागस्तालाजा चाटना ।	व्रत-यय]-सं०९-पृठक्ष, [कातिकमासक व्रत-यय]-सं०९०-पृठक्ष, [मार्गशीर्षमासके व्रत-पर्व]-सं०१९-पृ०३९, [पौषमासके व्रत-पर्व]-
· ·	
(विद्यावाचस्पति डॉ० श्रीराजेशजी उपाध्याय नार्मदेय,	सं०११-पृ०४०, [माघमासके व्रत-पर्व]-सं०१२-पृ०३९, [फाल्गुन-
एम० ए०, पी-एच० डी०) सं०३-पृ०३५	मासके ब्रत-पर्व]-सं०१२-पृ०४०
९५- भारतीय गोवंशकी विशेषताएँ (डॉ० श्रीअशोकजी काले)	१२१ - शास्त्रीय दिनचर्याका अनुकरण ही श्रेयस्कर
[प्रेषक—श्रीरामदयालजी पोद्दार] सं०७-पृ०४१	(डॉ॰ श्रीकमलाकान्तजी तिवारी)
९६- भारतीय परम्परामें गोत्र एवं प्रवरका तात्पर्य (सुश्री रीना रघुवंशी,	[प्रेषक—पं० श्रीरामकृष्णजी शास्त्री]सं०९-पृ०३४
एम०ए० (हिन्दी, संस्कृत), एम०फिल०) सं०८-पृ०३०	१२२-शिवजी भैया [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया)
९७- भारतीय संस्कृतिका मूलाधार—गोसेवा	[प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०७-पृ०३८
(श्रीपंकजकुमारजी झा, नव्य व्याकरणाचार्य) सं०१०-पृ०४०	१२३– शुभ नहीं, अशुभ कार्योंको टालते रहो
९८- भावनाओंपर नियन्त्रण (श्रीइन्द्रदेवजी सक्सेना) सं०५-पृ०३८	(श्रीसीतारामजी गुप्ता) सं०८-पृ०२६
९९-'भावे हि विद्यते देव:'	१२४- श्रद्धा संस्कृतिका कवच है (श्रीरामनाथ 'सुमन') सं०५-पृ०१६
(दण्डी स्वामी श्रीमहेश्वरानन्दजी सरस्वती) सं०४-पृ०२२	१२५- श्रीप्रेमरामायण महाकाव्यमें सेवाधर्म (श्रीसुरेन्द्रकुमारजी
१००- मनका संयम (श्रीगौतमसिंहजी पटेल) सं०३-पृ०३०	रामायणी, एम०ए०, एम०एड०, साहित्यरत्न) सं०६-पृ०२६
१०१- मनको वशमें कैसे करें? (श्रीराधेश्यामजी चाँडक) सं०५-पृ०३२	१२६ - श्रीभगवन्नाम-जपकी शुभ सूचनासं०११ - पृ०४६
१०२- 'मन क्रम बचन करेहु सेवकाई'	१२७- श्रीभगवन्नाम-जपके लिये विनीत प्रार्थना सं०११-पृ०४९
	१२८- श्रीमद्रामेश्वरम् [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग]
१०३ - मनन करने योग्य सं०३ - पृ०४८, सं०४ - पृ०४८, सं०५ - पृ०४६,	(आचार्य श्रीरामरंगजी) सं०९-पृ०२९
सं०६-पृ०५०, सं०७-पृ०५०, सं०८-पृ०५०, सं०९-पृ०५०, सं०१०-	१२९ - श्रीराधाकृष्णकी दैनन्दिनी लीला (श्रीराधाबाबा)
पु०५०, सं०११-पु०४५, सं०१२-४६	[प्रेषिका—सुश्री शैवालिनी]सं०१०-पृ०२५
१०४- मनुष्यकी अधोमुखी प्रवृत्ति और उससे बचनेके उपाय	१३०- सच्चरित्र और सेवा (श्रीकृष्णनारायणजी राजपूत) .सं०२-पृ०३८
(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी	१३१- सच्चा जीवन-दर्शन (श्रीराजेशजी माहेश्वरी) सं०९-पृ०३२
श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)सं०६-पृ०१४	१३२ – सच्ची तीर्थयात्रा सं०१२ – प्०११
१०५ - मस्तिष्क या हृदय? (श्री 'माधव') सं०६ - पृ०१८	१३३- सच्ची भक्ति (श्रीशरद्चन्द्रजी पेंढारकर)सं०९-पृ०४०
१०६ – माताके संस्कार (श्रीदीपचन्दजी सुधार) सं०८ – पृ०१९	१३४- 'सत संगति दुर्लभ संसारा'
१०७- मातृशक्ति गौ (श्रीविष्णुकान्तजी सारडा) सं०५-पृ०३५	(वैद्य श्रीभगवतीप्रसादजी शर्मा)सं०७-पृ०२९
१०८- 'मानस पुन्य होहिं नहिं पापा' (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट्	१३५ - सनातन धर्मके अकाट्य मन्त्र-प्रयोग (ब्रह्मलीन अनन्तश्रीविभूषित
स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)सं०१२-पृ०१०	पूर्वाम्नाय गोवर्धन-पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी
१०९- मानसमन्दिर का स्वर्णकलश (डॉ० श्रीरामस्वरूपजी	श्रीनिरंजनदेवतीर्थजी महाराज)सं०१२-पृ०१४
ब्रजपुरिया, विद्यावाचस्पति) सं०७-पृ०३४	१३६ - सन्त उद्बोधन (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी
११०- मेरा कृष्ण (बहन श्रीरैहाना तैयबजी) सं०८-पृ०१७	श्रीशरणानन्दजी महाराज)सं०२-पृ०४२, सं०४-पृ०२४,
१११- रामकथामें मुसलिम साहित्यकारोंका योगदान	सं०५-पृ०३७, सं०७-पृ०४२, सं०८-पृ०४०, सं०९-पृ०४२,
(श्रीबद्रीनारायणजी तिवारी)सं०५-पृ०२५	१३७- सन्त कबीरका चिन्तन-संसार
११२-'राम नाम नरकेसरी'—तात्त्विक भावविमर्श	(श्रीकन्हैयासिंहजी विशेन)सं०१०-पृ०२७
(आचार्य श्रीविन्ध्येश्वरीप्रसादजी मिश्र 'विनय') सं०७-पृ०२३	१३८- संत श्रीगाड़गेजी महाराजका सेवाभाव सं०२-पृ०३४
११३-'लौ' (पं० श्रीभुवनेश्वरनाथजी मिश्र 'माधव',	१३९- सब कुछ भगवद्रूप सं०९-पृ०१३
एम० ए०)सं०५-पृ०१०	१४०-'सब तें सेवक धरमु कठोरा'
११४- वन्दनीय विद्वान्	(डॉ० श्रीभगवान दासजी पटैरया) सं०२-पृ०२६
[प्रो० श्रीविन्ध्येश्वरीप्रसादजी मिश्र 'विनय'] सं०१०-पृ०९	१४१ - सबमें आत्मभाव सं०४-पृ०२८
११५ - विश्वासका फल सं०६ - पृ०२१	१४२- समाजकी सेवा [कहानी] (श्री 'चक्र')सं०४-पृ०३६
११६ – वृद्धजनोंके प्रति युवाओंका कर्तव्य	१४३- सम्मान तथा मधुर भाषणसे राक्षस भी वशीभूत सं०९-पृ०१७
(श्रीइन्द्रमलजी राठी) सं०४-पृ०२७	१४४- संसार-जय
११७- वृद्ध माता-पिताकी सेवा (श्री श्रीकुमारजी मुँधड़ा) सं०२-पृ०२४	(पं० श्रीरामदयालजी मजूमदार, एम०ए०) सं०४-पृ०१०
११८ - व्यवहारिक अध्यात्म	१४५- संसारमें सार क्या है?
 [प्रेषक—हरिकृष्ण नीखरा (गुप्त)]सं०१२-पृ०३१	(स्वामी श्रीचिन्दानन्दजी महाराज 'सिहोरवाले') सं०३-पृ०११
११९- व्रजमें (कुँवर श्रीव्रजेन्द्रसिंहजी 'साहित्यालंकार') सं०८-पृ०१०	१४६ - साधक अभिमान न करे (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी
१२०- व्रतोत्सव-पर्व [चैत्रमासके व्रत-पर्व]-सं०२-पृ०४४,	श्रीशरणानन्दजी महाराज)सं०१०-पृ०३७
[वैशाखमासके व्रत-पर्व]-सं०३-पृ०४३, [ज्येष्ठमासके व्रत-पर्व]-	१४७- साधक निरन्तर अपनेको देखे (नित्यलीलालीन श्रद्धेय
सं०४-पृ०४३, [आषाढ्मासके व्रत-पर्व]-सं०५-पृ०३९, [श्रावण-	भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)

मासके व्रत-पर्व]-सं०६-पृ०४५, [श्रावणमासके व्रत-पर्व]-सं०७-

	<u> </u>
विषय पृष्ठ-संख्या	विषय पृष्ठ-संख्या
१४८- साधकोंके प्रति—(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी	(६) जरूरतमन्द लोगोंकी सेवाका लक्ष्य
श्रीरामसुखदासजी महाराज) सं०३-पृ०२१, सं०४-पृ०१९,	(श्रीमती विजया बेडेकर)सं०२-पृ०५०
सं०५-पृ०१८, सं०६-पृ०२२, सं०७-पृ०१९, सं०८-पृ०२०, सं०९-	१५७- सेवा, जप, ध्यान, प्रेम तथा व्याकुलता (ब्रह्मलीन परम
पृ०२०, सं०१०-पृ०१८, सं०११-पृ०१७, सं०१२-पृ०१५	श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०४-पृ०६, सं०५-पृ०६
१४९ – साधन अनेक साध्य एक (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी	१५८- सेवा-दर्शन (स्वामी श्रीरामराज्यम्जी) सं०२-पृ०८
श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)सं०११-पृ०१२	१५९- सेवा-धर्म (डॉ० श्रीनरेशकुमारजी शास्त्री,
१५०- साधन-सूत्र (आचार्य श्रीगोविन्दरामजी शर्मा) सं०४-पृ०२५,	एम०ए०, पी-एच०डी०)सं०२-पृ०३१
सं०९-पृ०२७	१६०- सेवा—प्रश्नोत्तर (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी
१५१- साधनोपयोगी पत्रसं०३-पृ०४०, सं०४-पृ०४१, सं०५-	श्रीरामसुखदासजी महाराज) सं०२-पृ०१६
पृ०४०, सं०६-पृ०४४, सं०७-पृ०४३, सं०८-पृ०४३, सं०९-पृ०४३,	१६१- सेवा ही सबसे बड़ा धर्म और पूजा है (श्रीरमेशचन्द्रजी बादल,
सं०१०-पृ०४३, सं०११-पृ०३७, सं०१२-पृ०३७	एम०ए०, बी०एड०, विशारद)सं०६-पृ०२९
१५२– सारा समय परमोपयोगी बनानेका साधन	१६२- सेव्य, सेवा और सेवकका अन्तस्सम्बन्ध
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०९-पृ०६	(डॉ॰ श्रीनरेन्द्रनाथजी ठाकुर, एम॰ ए॰ (संस्कृत, हिन्दी),
१५३ - सेवा (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी	एम० एड०, पी-एच० डी०)सं०२-पृ०१४
श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)सं०२-पृ०१२	१६३- सौ करोड़ रुपयोंका दान [प्रेरक प्रसंग]
१५४- सेवा [कहानी] (श्री 'चक्र') सं०२-पृ०३५, सं०३-पृ०३८	(श्रीमहावीरप्रसादजी नेवटिया)सं०१२-पृ०९
१५५ - सेवाकी पगडण्डियाँ (वैद्य श्रीबदरुद्दीनजी राणपुरी) सं०२-पृ०४३	१६४- स्वधर्मे निधनं श्रेय: (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय
१५६ - सेवाके प्रेरक प्रसंग—	श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०११-पृ०७
(१) मातृसेवाका दृष्टान्त (स्वामी श्रीआत्मश्रद्धानन्दजी)	१६५- हमारी आवश्यकता (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी
[प्रेषक—अरुण चूड़ीवाल] सं०२-पृ०४५	श्रीशरणानन्दजी महाराज)सं०११-पृ०३२
(२) सपूत सनातनकी मातृसेवासं०२-पृ०४६	१६६ - हमारी प्राचीन वैमानिक-कला
(३) वृद्ध-सेवाका सुपरिणाम (नरेन्द्र कुमार शर्मा) सं०२-पृ०४७	(श्रीदामोदरजी झा, साहित्याचार्य) सं०४-पृ०२९
(४) गोमाताकी सेवाने संकटसे बचाया	१६७- हरखूकी माँ [कहानी]
(महाराजसिंह रघुवंशी) सं०२-पृ०४८	(श्रीरामेश्वरजी टांटिया)
(५) साइकिलसवारको नि:स्वार्थ सेवा (देशराज) सं०२-पृ०४९	[प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०९-पृ०३८
पद्य-	सूची
१- 'किशोरी अब आन परौं तोरे द्वार' [कविता]	७– विमल पन्थ [कविता]
(श्रीबेताबजी केवलारवी)सं०७-पृ०१०	(श्रीमृदुलमोहनजी अवधिया)सं०३-पृ०१८
२- गौकी स्तुति [कविता]	८-'शरण तिहारी आयो'[कविता]
(श्रीसतीशचन्द्रजी चौरसिया 'सरस') सं०७-पृ०३०	(श्रीगोपीनाथजी पारीक 'गोपेश') सं०५-पृ०९
३ - दीनबन्धु कृष्ण [कविता]	९- शिवमहिमा [कविता]
(डॉ॰ पुष्पारानीजी गर्ग) सं॰९-पृ०३३	(श्रीगनेशीलालजी शर्मा 'लाल') सं०८-पृ०२३
४- भगवत्प्रेमसे हीन मानवका स्वरूप [कविता]	१०- सन्तवाणी [कविता]
(श्रीतुलसीदासजी) सं०६-पृ०९	[रसिक संत श्रीसरसमाधुरीजी] सं०९-पृ०३६
५- मन को बुहार [कविता]	११- 'हरि तोरे दरसन केहि बिधि पाऊँ' [कविता]
(श्रीशरदजी अग्रवाल, एम०ए०) सं०३-पृ०२३	(श्रीतेजपालजी उपाध्याय) सं०६-पृ०४०
६- 'मैं सेवक सीतापित मोरे' (पं॰ श्रीबाबूलालजी द्विवेदी,	१२- हरिनाम हृदै धरिए-धरिए [कविता]
'मानस मधुप', साहित्यायुर्वेदरत्न)सं०११-पृ०१९	(श्रीरुद्रपालजी गुप्त 'सरस')सं०२-पृ०११
	>
संकलित	⊢सामग्री
१ - उपमन्युद्वारा भगवान् गौरीशंकरका स्तवन सं०८-पृ०३	७- प्रार्थना सं०३-पृ०३
२- एक ही परम प्रभु पाँच उपास्यरूपोंमें सं०७-पृ०३	८- भक्त प्रह्लादद्वारा भगवान् नृसिंहकी
३- गीताका सन्देश—सबमें भगवद्-दृष्टि सं०१२-पृ०३	
४- चारों युगोंमें भगवान् विष्णुका ध्यान सं०४-पृ०३	स्तुति सं०५-पृ०३ ९– भगवती तुलसीको नमस्कार सं०११-पृ०३
५- देवताओंद्वारा भगवान् श्रीरामकी स्तुति सं०१०-पृ०३	१०- 'राघौ गीध गोद करि लीन्हों' सं०२-पृ०३
	arma '郑枫ADEWITHIDOVE BY Avinash/Sh

प्रकाशनकी प्रक्रियामें — संस्कारप्रकाश

संस्कारका अर्थ है—दोषोंका परिमार्जन करना। जीवके दोषों और किमयोंको दूरकर उसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थके योग्य बनाना ही संस्कारका उद्देश्य है। संस्कारोंसे अन्त:करण शुद्ध होता है। जिस प्रकार किसी मिलन वस्तुको धो-पोंछकर शुद्ध बना लिया जाता है अथवा जैसे सुवर्णको तपाकर उसके मलोंको दुर किया जाता है और मलके जल जानेपर स्वर्ण विशुद्ध रूपसे चमकने लगता है, ठीक उसी प्रकार संस्कारोंके द्वारा जीवके जन्म-जन्मान्तरोंसे संचित मलरूप कर्म-संस्कारोंका शद्धिकरण किया जाता है। यही कारण है कि हमारे सनातन धर्ममें बालकके गर्भमें आनेसे लेकर जन्म लेनेतक और फिर बढे होकर मरनेतक संस्कार किये जाते हैं।

वर्तमानमें भारतीय जन-जीवनमें संस्कारोंका लगभग लोप हो गया है. लोग केवल उपनयन, विवाह और मत्य संस्कारसे ही परिचित हैं। प्रस्तुत पुस्तकमें गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, उपनयन, विवाह, अन्त्येष्टि आदि सोलह संस्कारोंका पूर्ण परिचय, उनकी वैज्ञानिकता तथा करानेकी प्रक्रियाका सांगोपांग वर्णन किया गया है। इसके द्वारा सामान्य जनतासे लेकर संस्कारोंको सम्पन्न करानेवाले पुरोहित वर्गतक विशेष लाभ उठा सकते हैं।

गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित—व्रत-कथाओंकी पुस्तकें

व्रत-परिचय (कोड 610) — प्रस्तत पुस्तकमें प्रत्येक मासमें पडनेवाले व्रतोंके विस्तृत परिचयके साथ

वैशाख-कार्तिक-माघमास-माहात्स्य (कोड 1136)—शास्त्रोंमें माघ, कार्तिक तथा वैशाखमासका विशेष महत्त्व है। इन महीनोंमें किये गये पुण्य अक्षय होते हैं। इस पुस्तकमें पद्मपुराण तथा स्कन्दपुराणमें

उन्हें सही ढंगसे सम्पादित करनेकी विधि दी गयी है। इसके अतिरिक्त इसमें परिशिष्ट प्रकरणके अन्तर्गत अधिमासव्रत, संक्रान्तिव्रत, अयनव्रत, पक्षव्रत, वारव्रत, प्रायश्चित्तव्रत तथा अन्तमें वटसावित्री, मङ्गला गौरी, संकष्टचतर्थी, ऋषिपञ्चमी, शिवरात्रि आदि विभिन्न व्रतोंकी सन्दर कथाएँ दी गयी हैं। मल्य ₹५० एकादशीव्रतका माहात्म्य (मोटा टाइप) कोड 1162—इस प्स्तकमें पद्मप्राणके आधारपर २६ एकादिशयोंके माहात्म्य तथा विधिका बडा ही सन्दर चित्रण किया गया है। मुल्य ₹२०

वर्णित इन तीनों महीनोंके माहात्म्यका वर्णन किया गया है। मृल्य ₹३५ श्रीसत्यनारायणवृत (कोड 1367)—इस प्स्तकमें भगवान सत्यनारायणके पूजनविधिके साथ

स्कन्दपुराणसे उद्धत सत्यनारायण-व्रत-कथाको भावार्थसिहत दिया गया है। मुल्य ₹१२

गीता-दैनन्दिनी — (सन् २०१६) अब सीमित = संख्यामें उपलब्ध [मँगवानेमें शीघ्रता करें]

(प्रकाशनका मुख्य उद्देश्य-नित्य गीता-पाठ एवं मनन करनेकी प्रेरणा देना।)

पूर्वकी भाँति सभी संस्करणोंमें सुन्दर बाइंडिंग तथा सम्पूर्ण गीताका मूल-पाठ, बहुरंगे उपासनायोग्य चित्र, प्रार्थना, कल्याणकारी लेख, वर्षभरके व्रत-त्योहार, विवाह-मुहूर्त, तिथि, वार, संक्षिप्त पञ्चाङ्ग, रूलदार पुष्ठ आदि। डाक खर्च

पुस्तकाकार—विशिष्ट संस्करण (कोड 1431)—गीता-मूल, हिन्दी-अनुवाद, मृल्य ₹७० ₹ २५ ,, (बँगला अनुवाद (कोड 1489), ओड़िआ अनुवाद (कोड 1644),

तेलुगु अनुवाद (कोड 1714) मृल्य₹७०₹२५ सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 503)—गीताके मूल श्लोक एवं सूक्तियाँ मूल्य ₹ ५५ ₹ २५

प्लास्टिक आवरण (कोड 506)— गीता-मूल श्लोक, मूल्य ₹ ३० ₹ २० पाँकेट साइज gitapressbookshop.in से गीताप्रेस प्रकाशन online खरीदें।



रजि० समाचारपत्र—रजि०नं० २३०८/५७ पंजीकृत संख्या—NP/GR-13/2014-2016

LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENCE No. WPP/GR-03/2014-2016

जनवरी सन् २०१६ ('कल्याण' वर्ष ९०)-का विशेषाङ्क—'गंगा-अङ्क'

कल्याणके जिन ग्राहकोंका सदस्यताशुल्क दिसम्बर मध्यतक जमा हो जायगा उन्हें 'गंगा-अङ्क' रजिस्ट्रीके द्वारा, तदुपरान्त शेष ग्राहकोंको क्रमानुसार वी०पी०पी० के द्वारा प्रेषित किये जानेका कार्यक्रम रहेगा। सदस्यताशुल्क भेजनेपर भी यदि वी०पी०पी० प्रेषित हो गयी है तो सहृदयतावश वी०पी०पी० छुडा

लेनी चाहिये तथा प्रेषित रकमका विवरण भेज देना चाहिये। विशेषाङ्क प्रेषणकी सचना SMS के द्वारा देनेका प्रयास रहता है अतएव अपना मोबाइल नं० update करा लेवें। कदाचित् ग्राहक बने रहनेमें असमर्थता

हो तो सूचना प्रेषित करनेकी कृपा करें। किसी अनजान/कथित एजेन्टको सदस्यताशुल्क न देवें। नये ग्राहक भी वी०पी०पी० द्वारा अंक मँगा सकते हैं।

विशेष सुविधा—अब मासिक अंकोंको भी रजिस्टर्ड डाकसे भिजवानेकी सुविधा उपलब्ध है। वार्षिक ग्राहक सदस्यताशुल्कके अतिरिक्त ₹२०० (दो सौ) तथा पंचवर्षीय ग्राहक ₹१००० (एक हजार) जमाकर प्रत्येक माहका अंक रजिस्टर्ड डाकसे प्राप्त कर सकते हैं।

स्वयं ग्राहक बने रहें एवं इष्ट-मित्रोंको भी ग्राहक बनावें। नये वर्षमें उपहारस्वरूप देनेके लिये 'गंगा-अङ्क' सर्वोत्तम भेंट है।

सदस्यता-शुल्क — वार्षिक ₹ २०० अजिल्द (₹ २२० सजिल्द), पंचवर्षीय ₹ १००० अजिल्द (₹११०० सजिल्द)। इंटरनेटसे सदस्यता-शुल्क-भुगतानहेतु gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।

व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो०—गीताप्रेस—२७३००५ (गोरखपुर) (उ०प्र०)

		'कल्याण	ा' के	पुनर्मुद्रित	उपलब्ध	विशे	षाङ्क			
कोट	<u> ਰਿशोघाङ</u>	<u>п</u> ал ₹	कोट	विशेषाङ	ш ал ₹		٦,,	छोषाङ	,	பு ₹

		300	-4.	3 3 3 7 1	• ((((' ''क		
कोड	विशेषाङ्क	मूल्य ₹	कोड	विशेषाङ्क	मूल्य₹ कोड	ि	प्रशेषाङ <u>्क</u>	मूल्य र
	6			, , ,				

41 | शक्ति-अङ्क सं० श्रीवाराहपुराण १५० 574 संक्षिप्त योगवासिष्ठ 1361 १०० १६०

योगाङ्क (परिशिष्टसहित) सं० श्रीमद्देवीभागवत सूर्याङ्क 200 1133 280 791 १३० 616

______ तीर्थाङ्क सं० शिवपुराण सं० भविष्यपराण 636 789 584 200 200

१५० साधनाङ्क सं० ब्रह्मवैवर्तपुराण कूर्मपुराण — सानुवाद 240 631 200 1131

604 १४०

1773 गो-अङ्क गोसेवा-अङ्क वेद-कथाङ्क-परिशिष्टसहित १७५ 990 653 १३० 1044

संक्षिप्त पद्मपुराण भगवन्नाम-महिमा धर्मशास्त्राङ्क 1135 44 240 970 1132 १५०

संक्षिप्त मार्कण्डेयपुराण और प्रार्थना अङ्क सं० गरुडपुराण 90 1189 १६०

539 परलोक-पुनर्जन्माङ्क **भगवत्प्रेम-अङ्क-**अजिल्द 1111 970 **572** 1542 ६५ 200

नारी-अङ्क गर्ग-संहिता आरोग्य-अङ्क 43 280 517 240 1592 200 970

नरसिंहपुराणम्-सानुवाद महाभागवत (देवीपुराण) उपनिषद्-अङ्क 659 200 1113 800 1610 सं० स्कन्दपुराण अग्निपुराण 279 324 1362 200 1793 **श्रीमदेवीभागवताङ्क**-पूर्वार्द्ध भक्त-चरिताङ्क वामनपुराण-सानुवाद श्रीमदेवीभागवताङ्क -उत्तरार्ध 40 २३० 1432 १२५ 1842

मत्स्यमहापुराण (सानुवाद) श्रीलिङ्गमहापुराणाङ्क-सानुवाद 1183 सं० नारदपुराण 200 557 200 1985 संतवाणी-अङ्क 667 657 श्रीगणेश-अङ्क 1947 भक्तमाल-अङ्क १५० 900

हनुमान-अङ्क (परिशिष्टसहित) 587 सत्कथा-अङ्क 200 240 1980 ज्योतिषतत्त्वाङ्क मासिक 'कल्याण' kalyan-gitapress.org पर नि:शुल्क पढें।

१००

800

200

१३०

१३०